राजा बलदेव दास बिड़ला ग्रंथमाला

नाथ सिद्धों की बानियाँ

१

प्रधान संपादक : रुद्र काशिकेय

काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

सं० २०३५

बिड़ला ग्रंथमाला — १

नाथ सिद्धों की बानियाँ

संपादक

हजारीप्रसाद द्विवेदी

नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

प्रकाशक : नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

मुद्रक : सीमा प्रेस, ईश्वरगंगी, वाराणसी

द्वितीय संस्करण, ११०० प्रतियाँ, संवत् २०३५ वि०

मूल्य ८.०० रुपये

राजा बलदेवदास बिड़ला ग्रंथमाला

प्रस्तुत ग्रंथमाला के प्रकाशन का एक संक्षिप्त सा इतिहास है। उत्तर प्रदेश के राज्यपाल महामहिम श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी जब काशी नागरीप्रचारिणी सभा में पधारे थे तो यहाँ के सुरक्षित हस्तलिखित ग्रंथों को देखकर उन्होंने सलाह दी थी कि एक ऐसी ग्रंथमाला निकाली जाय, जिसमें सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण ग्रंथ मुद्रित कर दिए जाएँ। बहुत अधिक परिश्रमपूर्वक संपादित ग्रंथ छापने के लोभ में पड़कर अनेकानेक महत्वपूर्ण ग्रंथों को अमुद्रित रहने देना उनके मत से बहुत बुद्धिमानी का काम नहीं है। उन्होंने सलाह दी कि पुस्तकें पहले मुद्रित हो जाएँ, फिर विद्वानों को उनकी सामग्री के विषय में विचारने का अवसर मिलेगा। सभा के कार्यकर्ताओं को राज्यपाल महोदय की यह सलाह पसंद आई। हीरकजयंती के अवसर पर सभा ने जिन कई महत्वपूर्ण कार्यों की योजना बनाई, उनमें एक ऐसी ग्रंथमाला का प्रकाशन भी था। सभा का प्रतिनिधिमंडल जब इन योजनाओं के लिये धनसंग्रह करने के उद्देश्य से दिल्ली गया तो सुप्रसिद्ध दानवीर सेठ घनश्यामदास जी बिड़ला से मिला और उनके सामने इन योजनाओं को रखा। बिड़लाजी ने सहर्ष इस ग्रंथमाला के लिये ५०००) रुपया की सहायता देना स्वीकार कर लिया और सभा के प्रतिनिधिमंडल को इस विषय में कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं हुई। बिड़ला परिवार की उदारता से आज भारतवर्ष का बच्चा बच्चा परिचित है। इस परिवार ने भारतवर्ष के सांस्कृतित उत्थान के लिये अनेक महत्वपूर्ण दान दिए हैं। सभा को इस प्रकार की ग्रंथमाला के लिये प्रदत्त दान भी उन्हीं महत्वपूर्ण दानों की कोटि में आएगा। सभा ने निर्णय किया कि इन रुपयों से प्रकाशित होनेवाली ग्रंथमाला का नाम श्री घनश्यामदास जी बिड़ला के पूज्यपिता राजा बलदेवदास जी बिड़ला के नाम पर रखा जाय और इसकी आय इसी कार्य में लगती रहे।

—:❀:—

परिचय

जह मन पवन न सञ्चरइ,
रवि शशि नाह प्रवेश।
तहि वट चित्त विसाम करु
सरहे कहिअ उवेश ॥

[जहाँ तक न मन जाता है न पवन जाता है, जहाँ न रवि का प्रवेश है न शशि का प्रवेश है, सरह कहते हैं कि हे चित्त ! तुम वहीं विश्राम करो ।]

सिद्ध सरहपा ने उक्त दोहों में जिस समाधि-दशा का संकेत किया है, उसकी प्राप्ति के लिए गम्भीर साधना आवश्यक है और इसीलिए उस स्थान तक चित्तगति को ले जाने के लिए जहाँ 'न सूर्यो भाति न शशाङ्को न पावकः' साधकगण साधनाएँ करते रहे हैं, जिसका यह स्वाभाविक परिणाम है कि—हमारे देश में सिद्ध- साधना और साधकों की चर्चा प्राचीनकाल से ही चली आ रही है। वैसे तो किसी भी कार्य का निरन्तर अभ्यास करना साधना कहा जाता है। साधना करनेवाला साधक कहलाता है और उस कार्य में निरन्तर अभ्यास द्वारा सफलता अथवा सिद्धि प्राप्त करनेवाला सिद्ध कहलाने का अधिकारी होता है।

हमारी संस्कृति ने यह बहुत पहले ही स्वीकार कर लिया था कि 'रुचीनां वैचित्र्यात् ऋजुकुटिलनानापथजुषाम् । नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव' अर्थात् जैसे टेढ़े सीधी बहती हुई सभी नदियाँ अन्त में समुद्र में ही पहुँचती हैं वैसे ही रुचि भेद के कारण टेढ़ा सीधा साधना पथ अपना कर सभी साधक अन्त में उस भगवान् तक ही पहुँचते हैं। ऐसी ही मान्यता के फलस्वरूप हमारा भारत विभिन्न धार्मिक साधनाओं का क्षेत्र रहा है। फलतः प्रत्येक सम्प्रदाय के सिद्ध भी रहे हैं। इस प्रकार नाथ सम्प्रदाय के सिद्ध नाथसिद्ध कहलाते हैं। इन्हीं में से चौबीस सिद्धों की रचनाएँ प्रस्तुत ग्रन्थ में सम्पादित की गयी हैं।

स्वर्गीय डाक्टर पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने गोरखबानी की भूमिका में गोरखनाथ के अतिरिक्त अन्य नाथ सिद्धों की बानियों को भी प्रकाशित करने की घोषणा की थी, किन्तु असमय ही अकस्मात देहान्त हो जाने के कारण यह कार्य न हो पाया। डाक्टर बणथ्वाल के इस महान् अधूरे कार्य को प्रस्तुत संग्रह द्वारा पूरा करने का प्रयत्न किया गया है। डाक्टर बड़थ्वाल ने नाथ सिद्धों की रचनाओं का संग्रह भी कर लिया था। परन्तु इस संग्रह ग्रन्थ 'नाथ सिद्धों की बानियाँ' की भूमिका से यह स्पष्ट नहीं होता कि संग्रहकर्ता ने डाक्टर बड़थ्वाल के संग्रह से सहायता ली है या नहीं। संकेत तो यही है कि विद्वान् सम्पादक को डाक्टर बड़थ्वाल का संग्रह नहीं मिला।

इस संग्रह में प्रयुक्त पोथियाँ हस्तलिखित रूप में नागरीप्रचारिणी सभा के आर्य भाषा पुस्तकालय से ली गई हैं। इसके अतिरिक्त पिंडी के जैन भांडार, कमंद्र मठ तथा दर्बार लाइब्रेरी जोधपुर से भी कुछ पुस्तकें प्राप्त कर उनका उपयोग प्रस्तुत संग्रह में किया गया है। अच्छा होता यदि बड़थ्वाल जी द्वारा संगृहीत हस्तलिखित पोथियों का भी भलीभाँति उपयोग कर लिया जाता। जितनी पोथियाँ प्रकाशित की जा रही हैं, उनकी भाषा १५-१६ वीं शताब्दी के बाद की है। गोरखबानी की भाषा के विषय में डाक्टर बड़थ्वाल ने भी यही बात कही थी।

इस संग्रह के प्रकाशित होने के पूर्व नाथ सिद्धों की बानियों के कुछ और संग्रह ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। महापण्डित राहुल सांकृत्यायन और डाक्टर धर्मवीर भारती ने भी इस दिशा में काम किया है। डाक्टर कल्याणी मल्लिक ने सिद्ध सिद्धान्त पद्धति ऐन्ड अदर वर्क्स आव नाथ योगीज' का सम्पादन कर उसे पूने से १९५४ ई० में प्रकाशित कराया है। इसमें नाथ सिद्धों की विभिन्न संस्कृत रचनाओं के अतिरिक्त आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की भी कुछ रचनाओं का प्रकाशन किया गया है। जैसे—गोरक्ष उपनिषद्, मत्स्येन्द्रनाथ जी का पद, भरथरी जी की सबदी, जालन्धरीपादजी की सबदी। यह सम्पादन कार्य विभिन्न हस्तलिखित पोथियों के आधार पर किया गया है।

प्रस्तुत संग्रह में अपेक्षाकृत अधिक नाथ सिद्धों की रचनाएँ संपादित हैं। इनके रचयिता नाथ सिद्धों की कुल संख्या २४ है। इस संग्रह की गोपीचंदजी की सबदी, जलंध्रीपावजी की सबदी, चरपटीजी की सबदी तथा मच्छन्द्रनाथजी का पद इन रचनाओं के पाठ भेदादि के लिये डाक्टर मल्लिक के ग्रन्थ का सदुपयोग किया जा सकता है। इन रचनाओं की भाषा के सम्बन्ध में डाक्टर मल्लिक का मत है कि यह अंशतः राजस्थानी तथा अंशतः हिन्दुस्तानी है। इसके अतिरिक्त श्री योग प्रचारिणी सभा गोरक्ष टिल्ला, वाराणसी से प्रकाशित श्री नाथ शतकम् पुस्तिका में चन्द्रनाथ तथा गरीबनाथ जी की सबदियाँ प्रकाशित हुई हैं। परन्तु प्रस्तुत ग्रन्थ में चन्द्रनाथ की कोई सबदी नहीं है। इससे सम्पादित गरीबनाथजी की सबदी शतक में प्रकाशित उनकी सबदी से अंशतः भिन्न है और पाठभेद भी है।

इन सब रचनाओं के प्रकाशित होने के पूर्व नाथ सिद्धों की दर्शन साधना तथा काव्यरूप के अध्ययन का एक मात्र आधार गोरखवानी (जोगेसुरी बानी) ही था। अब इन रचनाओं के प्रकाशन से रचयिता नाथसिद्धों की संख्या के साथ ही रचनाओं की भी वृद्धि हुई है, परन्तु प्राप्त रचनाओं की वृद्धि के साथ ही उनकी प्रामाणिकता में कोई वृद्धि नहीं हुई है। प्राप्त सामग्री के आधार पर पूर्ण विश्वास के साथ यह नहीं कहा जा सकता कि ये रचनाएँ उन्हीं सिद्धों की हैं, जिनके नाम से वे प्रचलित और प्रचारित हैं।

जिन नाथ सिद्धों की बानियाँ इस संग्रह में सम्पादित, है उनमें गोरक्ष, मत्स्येंद्र, चौरंगीनाथ, चर्पट, काणेरी, जालंधरि, गोपीचन्द और भरथरी ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। इन लोगों का समय नवीं ई० शताब्दी से १२ ई० शताब्दी तक विस्तृत है। इनमें सर्वाधिक महिमामंडित व्यक्तित्व गोरक्षनाथ का है। अब यह प्रायः निर्विवाद है कि बौद्ध सिद्धों और नाथ सिद्धों दोनों में समान रूप से समादृत मत्स्येन्द्र गोरख के गुरु थे। अभिनवगुप्तपाद ने मच्छन्द विभु का स्तवन किया है। यह स्तवन भी तांत्रिक शैव ग्रन्थ तन्त्रालोक में किया गया है। अतः इससे दो तथ्य हाथ लगते हैं। पहला यह कि मत्स्येन्द्र परम माहेश्वराचार्य अभिनवगुप्तपाद के पूर्ववर्ती थे और दूसरा यह कि वे तांत्रिक शैव सिद्ध थे।

इस बात पर भी ध्यान रखना आवश्यक है कि भारत के विभिन्न स्थानों में अपने अस्तित्व तथा प्रभावविस्तार के लिये सम्प्रदायों में अत्यधिक तीव्र संघर्ष था। कहीं इन शैवों ने वैष्णवों के कंधा से कंधा भिड़ा कर बौद्धों और जैनों का विरोध किया और कहीं तान्त्रिकों से सहयोग कर विरोधियों से लोहा लिया। उसी संघर्ष काल में अभिनव गुप्त का अभ्युदय हुआ था। प्रस्तुत ग्रन्थ की भूमिका में नाथ सिद्धों का प्रारम्भिक आविर्भाव काल नवीं ई० शताब्दी माना गया है। नाथ सिद्धों, नव नाथों और चौरासी सिद्धों की विभिन्न सूचियों तथा काल निर्णय के स्रोतों पर विचार करने पर इस निष्कर्ष तक पहुँचा जा सकता है कि इन नाथ सिद्धों का आविर्भाव तथा विचारकाल नवीं ई० शताब्दी से लेकर बारहवीं ई० शताब्दी तक था। साधनात्मक तथा दार्शनिक ग्रन्थों के अध्ययन से प्रतीत होता है कि इन दोनों प्रकार के सिद्धों में तान्त्रिक धारा जीवित थी।

राजनीतिक परिवर्तन तथा सामाजिक उथल पुथल से इन सम्प्रदायों में उपसम्प्रदाय जन्म लेते रहे। ये एक दूसरे में अन्तर्भुक्त भी होते रहे। इन सम्प्रदायों के परस्पर मिश्रण की कथा अत्यधिक उलझी हुई है। लोकश्रुति और ऐतिहासिक श्रुति दोनों में भारी अन्तर है। हमें केवल ऐतिहासिक श्रुति पर विश्वास करना चाहिए। लोकश्रुति की अपेक्षा ऐतिहासिक श्रुति भले हो कम सूचना दे फिर भी वह अधिक उपयोगी है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी साहित्य की इस शाखा के प्रसिद्ध अधिकारी विद्वानों में गिने जाते हैं। अतः उनके द्वारा सम्पादित प्रस्तुत ग्रन्थ सभी दृष्टियों से उपादेय होना ही चाहिए। मैं आचार्य द्विवेदीजी का कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने स्वयं ही ग्रन्थ की भूमिका में सभी ज्ञातव्य बातें दे दी हैं और इस प्रकार मुझे अधिक पिष्ट-पेषण से बचा दिया है। वस्तुतः प्रस्तुत ग्रन्थ पर लेखनी चलाना ही मेरी अनधिकार चेष्टा है क्योंकि इसका मुद्रण उसी समय हो चुका था, जिस समय आचार्य हजारी-प्रसाद जी ही प्रस्तुत ग्रन्थमाला के प्रधान सम्पादक थे, परन्तु इसका प्रकाशन अब हो रहा है। इसलिए विवशतः हाथ से आटा लगाकर मैं भण्डारी बन रहा हूँ। निष्ठापूर्ण सहायता के लिये मैं अपने सहायक श्री कल्पनाथ सिंह का भी कृतज्ञ हूँ। हमें आशा

है कि आचार्य जी के इस कार्य से प्रेरणा पाकर सिद्ध साहित्य में शोधकार्य अग्रसर करने की ओर अन्य विद्वान् भी उन्मुख होंगे और प्रस्तुत ग्रन्थ से आंजन का काम लेते हुए जीर्ण पृष्ठ-भूमि में छिपे रत्नों का पता लगाकर गोस्वामीजी का यह दोहा सार्थक करेंगे कि:—

यथा सु अंजन आंजि दृग, साधक सिद्ध सुजान।
कौतुक देखत फिरहिं बन, भूतल भूरि निधान॥

—रुद्र काशिकेय
प्रधान सम्पादक
बिड़ला ग्रन्थमाला
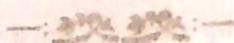
भूमिका

नाथ सिद्धों की हिंदी बानियों का यह संग्रह कई हस्तलिखित प्रतियों से संकलित हुआ है। इसमें गोरखनाथ की बानियाँ संकलित नहीं हुईं, क्योंकि स्वर्गीय डॉ० पीतांबर दत्त बड़थ्वाल ने गोरखनाथ की बानियों का संपादन पहले से ही कर दिया है और वह 'गोरखबानी' नाम से प्रकाशित भी हो चुकी हैं (हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग)। बड़थ्वाल जी ने अपनी भूमिका में बताया था कि उन्होंने अन्य नाथ सिद्धों की बानियों का संग्रह भी कर लिया है, जो इस पुस्तक के दूसरे भाग में प्रकाशित होगा। दूसरा भाग अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ और अत्यंत दुःख की बात है कि उसके प्रकाशित होने के पूर्व ही विद्वान् संपादक ने इहलोक त्याग दिया। डॉ० बड़थ्वाल की खोज से निम्नलिखित ४० पुस्तकों का पता चला था, जिन्हें गोरखनाथ-रचित बताया जाता है। डा० बड़थ्वाल ने बहुत छान-बीन के बाद इनमें प्रथम १४ ग्रंथों को निस्संदिग्ध रूप से प्राचीन माना, क्योंकि इनका उल्लेख प्रायः सभी प्रतियों में मिला। तेरहवीं पुस्तक ग्यानचौंतीसा समय पर न मिल सकने के कारण उनके द्वारा संपादित संग्रह में नहीं आ सका, परंतु बाकी तेरह को गोरखनाथ की बानी समझकर उस संग्रह में उन्होंने प्रकाशित कर दिया है। पुस्तकें ये हैं :—

१ सबदी
२ पद
३ शिष्यादर्शन
४ प्राण संकली
५ नरवै बोध
६ आत्मबोध
७ अभय मात्रा जोग
८ पंद्रह तिथि
९ सप्तवार
१० मछिंद्रगोरखबोध
११ रोमावली
१२ ग्यान तिलक
१३ ज्ञान चौंतीसा
१४ पंचमात्रा
१५ गोरखगणेशगोष्ठी
१६ गोरखदत्तगोष्ठी (ग्यान दीपबोध)
१७ महादेवगोरखगुष्टि
१८ शिष्ट पुराण
१९ दयाबोध
२० जातिभौंरावली (छंद गोरख)
२१ नवग्रह
२२ नवरात्र
२३ अष्टापारछ्या
२४ रह रास
२५ ग्यान माला
३२ खाणीवाणी
३३ गोरखसत
३४ अष्टमुद्रा

२६ आत्मबोध (२)
२७ व्रत
२८ निरंजन पुराण
२९ गोरख वचन
३० इंद्री देवता
३१ मूलगर्भावली
३५ चौबीस सिध
३६ षडक्षरी
३७ पंच अग्नि
३८ अष्ट चक्र
३९ अवलिसिलूक
४० काफिरबोध

गोरखनाथ की प्रामाणिक समझी जानेवाली बानियों के प्रकाशित हो जाने के कारण इस संग्रहमें उन्हें नहीं लिखा गया। अन्य सिद्धों की जो बनियाँ उपलब्ध हुईं, उन्हें प्रकाशित किया जा रहा है।

इस संग्रह की अधिकांश बानियाँ नागरीप्रचारिणी सभा के आर्यभाषा-पुस्तकालय में सुरक्षित तीन हस्तलिखित पुस्तकों से संगृहीत की गई हैं। इसके पद-कर्त्ताओं का विवरण इस प्रकार है :—

'क' प्रति अर्थात् नागरी प्रचारिणी सभा काशी के आर्यभाषा पुस्तकालय में सुरक्षित हस्तलिखित पुस्तक सं० १४०९ से संगृहीत सिद्धों की सूची। (इस प्रति का लिपिकाल सं० १७७१ वि० है।) :—

सिद्ध नाम	पद संख्या	सिद्ध नाम	पद संख्या
१ गोरखनाथ	१५६	७ मीडकीपाव	७
२ चरपटी जी	५५	८ काणेरी पाव	६
३ भरथरी	३२	९ जती हणवंत	८९
४ गोपीचन्द्र	१८	१० नागा अरजन जी	३
५ जलंध्री पाव	९	११ महादेव जी	१०
६ हाली पाव	५	१२ पारबती जी	६

'ख' प्रति अर्थात् नागरीप्रचारिणी सभा, काशी के आर्यभाषापुस्तकालय में सुरक्षित हस्तलिखित पुस्तक सं० १४०८ से संगृहीत 'सिद्धों' की सूची (इस प्रति का लिपिकाल सं० १८३६ वि० है।) :—

सिद्ध नाम	पद संख्या	सिद्ध नाम	पद संख्या
१ मछेन्द्र जी का पद	१	१४ चौरंगीनाथ	४
२ गोरखनाथ	१८३	१५ सिध घोड़ा चोली	१५
३ चरपटनाथ	५८	१६ सिध हरताली	६
४ भरथरी	३७	१७ हालीपाव	७
५ हणवंत	१	१८ मीडकी पाव	७
६ बाल गुन्दाई	२	१९ चुणकर नाथ	४

पद नाम	सिद्ध संख्या	पद नाम	सिद्ध संखमा
७ सिध गरीब जी	९	२० अजैपाल	१०
८ देवल जी	५	२१ पारबती जी	६
९ दत्त जी	१७	२२ महादेव जी	१५
१० गोपीचन्द जी	३५	२३ हणवंत जी	९
११ जलंध्री पाव	९	२४ सती काणेरी	६
१२ बालनाथ	६	२५ पृथ्वीनाथ	११८
१३ घूंघलीमल	१४		

'ग' प्रति अर्थात् नागरीप्रचारिणी सभा काशी के आर्यभाषापुस्तकालय में सुरक्षित हस्तलिखित पुस्तक नं० ८७३ से संगृहीत सिद्धों की और उनकी रचनाओं की सूची (इस प्रति का लिपिकाल १८५५-५६ वि० है।) :—

सिद्ध नाम

१ ग्रंथ गोरख बोध
२ दत्तात्रे गोरख संवाद
३ गोरख गणेश गुष्टि
४ ग्रंथ ज्ञान तिलक
५ ग्रंथ अभैमातरा
६ ग्रंथ बतीस लछन
७ ग्रंथ सिष्टि पुराण
८ चौबीस सिध्या
९ आतमाबोध ग्रंथ
१० ग्रंथ षड़ाछिरो
११ रहरासि ग्रंथ (दयाबोध)
१२ ग्रंथ गिनांन माला
१३ ग्रंथ रोमावली पंचमासरा
१४ ग्रंथ पंच अग्नि, तिथजोग ग्रंथ
१५ ग्रंथ सतबार, सप्तबार नौग्रह
१६ ग्रंथ आतमबोध
१७ ग्रंथ शिष्यादरसण
१८ ग्रंथ अष्टमुद्रा
१९ ग्रंथ अष्टचक्र
२० ग्रंथ रामबोध

सिद्ध नाम

२४ जलंधरी पाव जी की सबदी
२५ पृथ्वीनाथ जी की सबदी
२६ चौरंगो नाथ जी की सबदी
२७ काणोरी पाव जी की सबदी
२८ हालीपाव जी की सबदी
२९ भीडकी पाव जी की सबदी
३० हणवंतजी की सबदी
३१ नागा अरजन जी की सबदी
३२ सिद्ध हरताली जी की सबदी
३३ सिद्ध गरीब
३४ धूंधली मल
३५ रामचन्द्रजी
३६ बाल गुंदाई जी
३७ घोड़ाचोली
३८ अजयपाल
३९ चौंणकनाथ
४० देवलनाथ
४१ महादेवजी
४२ पार्वती जी
४३ सिद्ध माली पाव

सिद्ध नाम

२१ भरथरी जी की सबदी

२२ गोपीचन्द जी की सबदी

२३ चिरपट जी की सबदी

सिद्ध नाम

४४ शुकलहंस जी

४५ दत्तात्रेजी

इन तीन प्रतियों में पाई जानेवाली रचनाओं के अतिरिक्त कुछ अन्य स्रोतों से प्राप्त रचनाएँ भी प्रस्तुत संग्रह में संकलित हुई हैं। सबसे मनोरंजक और महत्वपूर्ण रचना चौरंगीनाथ की प्राण-संकली है, जो पिंडी के जैन-भण्डार में सुरक्षित एक प्रति से ली गई है। कुछ रचनाएँ काद्रि-मठाधीश श्री श्री चमेली नाथ जी महाराज की कृपा से प्राप्त हुई हैं। कई अन्य मित्रों ने भी कुछ रचनाएँ भेजी हैं। जोधपुर के डा० सोमनाथ जी ने वहाँ की दर्बारलाइब्रेरी से मत्स्येंद्रनाथ जी की कुछ रचनाएँ उद्धृत करके भेजी हैं। मित्रों की भेजी हुई रचनाओं को मैंने संग्रह में स्थान देने योग्य नहीं समझा, क्यों कि वैसे तो इस संग्रह की अनेक रचनाओं की प्रामाणिकता सन्दिग्ध है, परंतु मैंने जिन रचनाओं को छोड़ दिया है, उनकी अप्रामाणिकता सन्देह से परे है। इस प्रकार अनेक मित्रों की कृपा से यह संग्रह प्रस्तुत किया जा सका है।

गोरखनाथ का समय

मत्स्येंद्रनाथ और गोरखनाथ के समय के बारे में इस देश में अनेक विद्वानों ने अनेक प्रकार की बातें कही हैं। वस्तुत: इनके और इनके समसामयिक सिद्ध जालंधर नाथ और कृष्णपाद के सम्बन्ध में इस देश में अनेक दंतकथाएँ प्रचलित है। मैंने कुछ का संग्रह 'नाथ-संप्रदाय' नामक अपनी पुस्तक में किया है (हिंदुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद से सन् १९५० में प्रकाशित)। उन कथाओं को फिर से यहाँ दुहराना अनावश्यक है, पर उनके अध्ययन से और अन्य प्रामाणिक वृत्तों के आधार पर मैं जिस निष्जर्ष पर पहुँचा, उसे यहाँ दे देना आवश्यक है। गोरखनाथ और मत्स्येंद्रनाथ विषयक समस्त कहानियों के अनुशीलन से कई बातें स्पष्ट रूप से जानी जा सकती हैं। प्रथम यह कि मत्स्येंद्रनाथ और जालंधरनाथ समसामयिक थे; दूसरी यह कि मत्स्येंद्रनाथ गोरक्षनाथ के गुरु थे और जालंधरनाथ कानुपा या कृष्णपाद के गुरु थे; तीसरी यह कि मत्स्येंद्रनाथ कभी योग-मार्ग के प्रवर्तक थे, फिर संयोगवश एक ऐसे आचार में सम्मिलित हो गए थे, जिसमें स्त्रियों के साथ अबाध संसर्ग मुख्य बात थी—संभवत: यह वामाचारी साधना थी;—चौथी यह कि शुरू से ही जालंधरनाथ और कानिपा की साधना-पद्धति मत्स्येंद्रनाथ और गोरक्षनाथ की साधना-पद्धति से भिन्न थी। यह स्पष्ट है कि किसी एक का समय भी मालूम हो तो बाकी कई सिद्धों के समय का पता

आसानी से लग जायगा। समय मालूम करने के लिए कई युक्तियाँ दी जा सकती हैं। एक-एक करके हम उन पर विचार करें।

(१) सबसे प्रथम तो मत्स्येंद्रनाथ द्वारा लिखित कौलज्ञान-निर्णय ग्रंथ (कलकत्ता संस्कृत सीरीज में डा० प्रबोधचंद्र वागची द्वारा १९३४ ई० में संपादित) का लिपिकाल मिश्रित रूप से सिद्ध कर देता है कि मत्स्येंद्रनाथ ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्ववर्ती हैं।

(२) सुप्रसिद्ध काश्मीरी आचार्य अभिनव गुप्त ने अपने तंत्रालोक में मच्छंद विभु को नमस्कार किया है। ये 'मच्छंद विभु' मत्स्येंद्रनाथ ही हैं, यह भी निश्चित है। अभिनवगुप्त का समय निश्चित रूप से ज्ञात है। उन्होंने ईश्वर-प्रत्यभिज्ञा की वृहती वृत्ति सन् १०१५ ई० में लिखी थी और क्रमस्तोत्र की रचना सन् ९९१ ई० में की थी। इस प्रकार अभिनवगुप्त सन् ईसवी की दसवीं शताब्दी के अन्त में और ग्यारहवीं शताब्दी के आरंभ में वर्तमान थे। मत्स्येंद्रनाथ इससे पूर्व ही आविर्भूत हुए होंगे। जिस आदर और गौरव के साथ आचार्य अभिनव-गुप्तपाद ने उनका स्मरण किया है, उससे अनुमान किया जा सकता है कि उनके पर्याप्त पूर्ववर्ती होंगे।

(३) पंडित राहुल सांकृत्यायन ने गंगा के पुरातत्वांकि में ८४ वज्रयानी सिद्धों की सूची प्रकाशित कराई है। इसे देखने से मालूम होता है कि मीनपा नामक सिद्ध, जिन्हें तिब्बती परंपरा में मत्स्येंद्रनाथ का पिता कहा गया है, पर जो वस्तुतः मत्स्येंद्रनाथ से अभिन्न हैं, राजा देवपाल के राज्यकाल में हुए थे। राजा देवपाल ८०९--८४९ ई० तक राज्य करते (चतुरशीति सिद्ध प्रवृत्ति, तन्जूर ८६।१। कार्डियर पृ० २४७) इससे यह सिद्ध होता है कि मत्स्येंद्रनाथ नवीं शताब्दी के मध्य भाग में और अधिक से अधिक अन्त्य भाग तक वर्तमान थे।

(४) गोविंदचंद्र या गोपीचंद्र का संबंध जालंधरपाद से बताया जाता है। वे कानफा के शिष्य होने से जालंधरपाद की तीसरी पुश्त में पड़ते हैं। इधर तिरुमलय की शैललिपि से यह तथ्य उद्धार किया जा सका है कि दक्षिण के राजा राजेंद्र चोल ने मणिकचंद्र के पुत्र गोविंदचंद्र को पराजित किया था। बंगला में गोविंदचंद्रेर गान नाम से जो पोथी उपलब्ध हुई है, उसके अनुसार भी गोविंदचंद्र से किसी दाक्षिणात्य राजा का युद्ध वर्णित है। राजेंद्र चोल का समय १०६३ ई०--१११२ ई० है। इससे अनुमान किया जा सकता है कि गोविंदचंद्र ग्यारहवीं शताब्दी के मध्य भाग में वर्तमान थे। यदि जालंधरपाद उनसे सौ वर्ष पूर्ववर्ती हों तो भी उनका समय दसवीं शताब्दी के मध्य भाग में निश्चित होता है। मत्स्येंद्रनाथ का समय और भी

पहले निश्चित हो चुका है। जालंधरपाद उनके समसामयिक थे, इस प्रकार अनेक कष्ट-कल्पना के बाद भी इस बात से पूववर्ती प्रमाणों की अच्छी संगति नहीं बैठती।

(५) वज्रयानी सिद्ध कण्हपा (कानिपा, कानिफा, कान्हूपा) ने स्वयं अपने गानों में जालंधरपाद का नाम लिया है। तिब्बती परंपरा के अनुसार ये भी राजा देवपाल (८०६--८४६ ई०) के समकालीन थे। इस प्रकार जालंधरपाद का समय इनसे कुछ पूर्व ठहरता है।

(६) कन्थड़ी नामक एक सिद्ध के साथ गोरक्षनाथ का संबंध बताया जाता है। प्रबंधचिन्तामणि में एक कथा आती है कि चौलुक्य राजा मूलराज ने एक मूलेश्वर नाम का शिवमंदिर बनवाया था। सोमनाथ ने राजा के नित्य नियत वंदन-पूजन से सन्तुष्ट होकर अणहिल्लपुर में अवतीर्ण होने की इच्छा प्रकट की। फलस्वरूप राजा ने वहाँ त्रिपुरुष-प्रासाद नामक मंदिर बनवाया। उसका प्रबंधक होने के लिये राजा ने कंथड़ी नामक शैव सिद्ध से प्रार्थना की। जिस समय राजा उस सिद्ध से मिलने गया, उस समय सिद्ध को बुखार था, पर अपने बुखार को उसने कंथा में संक्रमित कर दिया। कंथा कांपने लगी। राजा ने कारण पूछा तो उसने बताया कि उसीने कंथा में ज्वर संक्रमिक कर दिया है। बड़े छल-बल से उस निःस्पृह तपस्वी को राजा ने मंदिर का प्रबंधक बनवाया। कहानी के सिद्ध के सभी लक्षण नाथपंथी योगी के हैं। इसलिये यह कंथड़ी निश्चय ही गोरखनाथ के शिष्य ही होंगे। प्रबंध चिन्तामणि की सभी प्रतियों में लिखा है कि मूलराज ने संवत् ९९३ की आषाढ़ी पूर्णिमा को राज्यभार ग्रहण किया था। केवल एक प्रति में ९९ संवत् है। इस हिसाब से जो काल-अनुमान किया जा सकता है, वह पूर्ववर्ती प्रमाणों से निर्धारित तिथि के अनुकूल ही है। ये ही गोरक्षनाथ और मत्स्येन्द्रनाथ का काल-निर्णय करने के ऐतिहासिक या अर्द्ध-ऐतिहासिक आधार हैं। परन्तु प्रायः दन्तकथाओं और साम्प्रदायिक परंपराओं के आधार पर भी काल-निर्णय का प्रयत्न किया जाता है। इन दन्तकथाओं से सम्बद्ध ऐतिहासिक व्यक्तियों का काल बहुत समय जाना हुआ रहता है। बहुत से ऐतिहासिक व्यक्ति गोरक्षनाथ के साक्षात् शिष्य माने जाते हैं। उनके समय की सहायता से भी गोरक्षनाथ के समय का अनुमान किया जा सकता है। ब्रिग्स ने ("गोरखनाथ एण्ड कनफटा योगीज़", कलकत्ता, १९३८) इन दन्तकथाओं पर अधारित काल को चार मोटे विभागों में इस प्रकार बांट लिया है :—

(१) कबीर, नानक आदि के साथ गोरक्षनाथ का संवाद हुआ था, इस पर दन्तकथाएं भी हैं और पुस्तकें भी लिखी गई है। यदि इनपर से गोरक्षनाथ का कालनिर्णय किया जाय, जैसा कि बहुत से पंडितों ने किया भी है, तो चौदहवीं शताब्दी के ईषत् पूर्व या मध्य में होगा। (२) गूगा की कहानी, पश्चिमी नाथों की अनु-

श्रुतियां, बंगाल की शैवपरम्परा और धर्मपूजा का संप्रदाय दक्षिण के पुरातत्व के प्रमाण, ज्ञानेश्वर की परंपरा आदि को प्रमाण माना जाय तो यह काल १२०० ई० के उधर ही जाता है। तेरहवीं शताब्दी में गोरखपुर का मठ ढहा दिया गया था, इसका ऐतिहासिक सबूत है। इसलिए निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि गोरखनाथ १२०० ई० के पहले हुए थे। इसकाल के कम से कम एक सौ वर्ष पहले तो यह काल होना ही चाहिए। (३) नेपाल के शैव-बौद्ध-परंपरा के नरेन्द्रदेव, उदयपुर के बाप्पाराव, उत्तर पश्चिम के रसालू और होदो, नेपाल के पूर्व में शंकराचार्य से भेंट आदि पर आधारित काल ८ वीं शताब्दी से लेकर नवीं शताब्दी तक के काल का निर्देश करते हैं। (४) कुछ परंपराएं इससे भी पूववर्ती तिथि की ओर संकेत करती हैं। ब्रिग्स दूसरी श्रेणी के प्रमाणों पर आधारित काल को उचित काल समझते हैं, पर साथ ही यह स्वीकार करते हैं कि यह अन्तिम निर्णय नहीं है। जब तक और कोई प्रमाण नहीं मिल जाता तब तक वे गोरक्षनाथ के विषय में इतना ही कह सकते हैं कि गोरक्षनाथ १२०० ई० से पूर्व, संभवतः ग्यारहवीं शताब्दी के आरंभ में, पूर्वी बंगाल में प्रादुर्भूत हुए थे। परन्तु सब मिलाकर वे निश्चित रूप से जोर देकर कुछ नहीं कहते और जो काल बताते हैं, उसे क्यों अन्य प्रमाणों से अधिक युक्तसंगत माना जाय, यह भी नहीं बताते। मैंने नाथ संप्रदाय में दिखलाया है कि किस प्रकार गोरक्षनाथ के अनेक पूर्ववर्ती मत उनके द्वारा प्रवर्तित बारहपंथी संप्रदाय में अन्तर्भुक्त हो गए थे। इन संप्रदायों के साथ उनकी अनेक अनुश्रुतियां और दन्तकथाएं भी संप्रदाय में प्रविष्ट हुईं। इसीलिये अनुश्रुतियों के आधार पर ही विचार करनेवाले विद्वानों को कई प्रकार को पस्परविरोधी परंपराओं से टकराना पड़ता है।

परन्तु ऊपर के प्रमाणों के आधार पर नाथमार्ग के आदिप्रवर्तकों का समय नवीं शताब्दी का मध्य-भाग ही उचित जान पड़ता है। इस मार्ग में इसके पूववर्ती सिद्ध भी बाद में चलकर अन्तर्भुक्त हुए हैं और इसलिये गोरक्षनाथ के संबंध में ऐसी दर्जनों दन्तकथाएं चल पड़ी हैं, जिनको ऐतिहासिक तथ्य मान लेने पर तिथि-संबंधी झमेला खड़ा हो जाता है। हमने नाथ-संप्रदाय में इन दन्तकथाओं की चर्चा की है।

गोरक्षनाथ के पूर्व ऐसे बहुत से शैव, बौद्ध और शाक्त-संप्रदाय थे, जो वेदबाह्य होने के कारण न हिंदू थे न मुसलमान। जब मुसलमानी धर्म प्रथम बार इस देश में परिचित हुआ तो नाना कारणों से देश दो प्रतिद्वंद्वी, धर्मसाधना-मूलक दलों में विभक्त हो गया। जो शैव मार्ग और शाक्त मार्ग वेदानुयायी थे, वे बृहत्तर ब्राह्मण-प्रधान हिंदूसमाज में मिल गए और निरंतर अपनेको कट्टर वेदानुयायी सिद्ध करने का प्रयत्न करते रहे। वह प्रयत्न आज भी जारी रहे। उत्तर भारत में ऐसे अनेक संप्रदाय थे, जो वेदबाह्य होकर भी वेदसंमत योग - साधना या पौराणिक देव-देवियों

की उपासना किया करते थे। वे अपने को शैव, शाक्त और योगी कहते रहे। गोरक्षनाथ ने उनको दो प्रधान दलों का पाया होगा—(१) एक तो वे जो योगमार्ग के अनुयायी थे, परंतु शैव या शाक्त नहीं थे, दूसरे (२) वे जो शिव या शक्ति के उपासक थे—शैवागमों के अनुयायी थे—परंतु गोरक्षसंमत योगमार्ग के उतने नजदीक नहीं थे। इनमें से जो लोग गोरक्षसंमत मार्ग के नजदीक थे, उन्हें उन्होंने योगमार्ग में स्वीकार कर लिया, बाकी को अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार दोनों ही प्रकार के मार्गों से ऐसे बहुत से संप्रदाय आ गए, जो गोरक्षनाथ के पूर्ववर्ती थे, परंतु बाद में उन्हें गोरखनाथी माना जाने लगा। धीरे-धीरे जब परंपराएं लुप्त हो गईं तो उन पुराने संप्रदायों के मूल-प्रवर्तकों को भी गोरक्षनाथ का शिष्य समझा जाने लगा। इस अनुमान को स्वीकार कर लेने पर वह व्यर्थ का वाद-समूह स्वयमेव परास्त हो जाता है, जो गोरखनाथ के कालनिर्णय के प्रसंग में पंडितों ने रचा है। इन तथाकथित शिष्यों के काल के अनुसार वे कभी आठवीं शताब्दी के सिद्ध होते हैं, कभी दसवीं, कभी ग्यारहवीं, और कभी-कभी तो पहली-दूसरी शताब्दी के भी।

संप्रदाय-भेद

गोरक्षनाथ द्वारा प्रवर्तित योगि-संप्रदाय नाना पंथों में विभक्त हो गया है। पंथों के अलग होने का कोई न कोई भेदक कारण हुआ करता है। हमारे पास जो साहित्य है, उसपर से यह समझना बड़ा कठिन है कि किन कारणों से और किन साधनाविषयक या तत्ववाद-विषयक मतभेदों के कारण ये संप्रदाय उत्पन्न हुए। इस सांप्रदायिक संघटन की इस समय जो व्यवस्था उपलभ्य है, उससे ऐसा मालूम होता है कि भिन्न-भिन्न संप्रदाय उनके थोड़े ही समय बाद और कुछ तो उनके जीवनकाल में ही उत्पन्न हो गए। भर्तृहरि उनके शिष्य बताए जाते हैं, कानिपा उनके समकालीन थे, पूरनभगत या चौरंगीनाथ भी उनके गुरुभाई और समकालीन बताए जाते हैं, गोपीचंद उनके समसामयिक सिद्ध जालंधरनाथ के शिष्य थे। इन सबके नाम से संप्रदाय चला है। जालंधर नाथ उनके गुरु के सतीर्थ्य थे, उनका प्रवर्तित संप्रदाय भी गोरक्षानाथ के सम्प्रदाय के अंतर्गत माना जाता है। इस प्रकार गोरक्षनाथ के पूर्ववर्ती समसायिक और ईषत्परवर्ती जितने सिद्ध हुए, उन सबके प्रवर्तित संप्रदाय गोरक्षपंथ में शामिल हैं। वर्तमान नाथपंथ में जितने संप्रदाय हैं, वे मुख्य रूप से उन बारह पंथों से सम्बद्ध हैं, जिनमें आधे शिवजी के द्वारा प्रवर्तित कहे जाते हैं और आधे गोरक्षनाथ द्वारा। इनके अतिरिक्त और भी बारह (या अट्ठारह) सम्प्रदाय थे, जिन्हें गोरक्षनाथ ने नष्ट कर दिया। उन नष्ट किए जानेवालों में कुछ शिव जी के सम्प्रदाय थे और कुछ स्वयं गोरक्षनाथ जी के। अर्थात् गोरक्षनाथ की जीवितावस्था में ही ऐसे बहुत से सम्प्रदाय थे, जो अपनेको उनका अनुवर्ती मानते थे और उन अनधिकारी

सम्प्रदायों का दावा इतना भ्रामक हो गया कि स्वयं गोरक्षनाथ ने ही उनमें से बारह या अठ्ठारह को तोड़ दिया। क्या यह सम्भव है कि कोई महान् गुरु अपने जीवित काल में ही अपने मार्ग को भिन्न-भिन्न उपशाखाओं में विभक्त देखे और उनके मतभेदों को तो दूर न करे बल्कि उनकी विभिन्नता को स्वीकार कर ले ? इस प्रकार की अनुश्रुति की कोइ ऐतिहासिक व्याख्या क्या सम्भव है ?

योगियों के इस विश्वास से मिलता-जुलता एक विश्वास सूफ़ी साधकों में भी प्रचलित है। अबुल हसन नूरी ने कशफुल महजूब (लाहौर, १९२३) में लिखा है कि सूफ़ियों के बारह संप्रदाय थे, जिनमें से दो को स्वयं परमात्मा ने तोड़ दिया और सिर्फ दस संप्रदायों को मान्यता दी। इस वक्तव्य से यह अनुमान किया जा सकता है कि नाथ-योगियों का विश्वास काफी पुराना है और उससे दूसरी साधना के लोग भी प्रवाहित हुए हैं।

गोरक्षनाथ का जिस समय आविर्भाव हुआ था, वह काल भारतीय धर्मसाधना में बड़े उथल-पुथल का है। एक ओर मुसलमान लोग भारत में प्रवेश कर रहे थे और दूसरी ओर बौद्ध साधना क्रमशः मंत्र-तंत्र और टोने-टोटके की ओर अग्रसर हो रही थी। दशवीं शताब्दी में यद्यपि ब्राह्मण-धर्म सम्पूर्ण रूप से अपना प्राधान्य स्थापित कर चुका था तथापि बौद्धों, शाक्तों और शैवों का एक बड़ा समुदाय ऐसा था, जो ब्राह्मण और वेद के प्राधान्य को नहीं मानता था। यद्यपि उनके परवर्ती अनुयायियों ने बहुत कोशिश की है कि उनके मार्ग को श्रुतिसम्मत मान लिया जाय, परंतु यह सत्य है कि ऐसे अनेक शैव और शाक्त संप्रदाय उन दिनों वर्तमान थे, जो वेदाचार को अत्यंत निम्न कोटि का आचार मानते थे और ब्राह्मण-प्राधान्य एकदम नहीं स्वीकार करते थे।

संक्षेप में देखा जाय कि किस प्रकार मुख्य पंथों का संबंध शिव और गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित पुराने संप्रदाओं के साथ स्थापित किया जाता है। नीचे ब्यौरा उसी संबंध को बताने के लिये दिया जा रहा है। इसे तैयार करने में मुख्य रूप से ब्रिग्स की पुस्तक 'गोरखनाथ ऐंड कनफटा योगीज़' का सहारा लिया गया है। परंतु अन्य मूलों से प्राप्त जानकारियों को भी स्थान दिया गया है।

(१) शिव के द्वारा प्रवर्तित प्रथम संप्रदाय भुज के कण्ठरनाथी लोगों का है। कण्ठरनाथ के साथ अन्य किसी शाखा का संबंध नहीं खोजा जा सका है।

(२) और (३) शिव द्वारा प्रवर्तित पागलनाथ और रावल संप्रदाय परस्पर बहुत मिश्रित हो गए हैं। ध्यान देने की बात है कि गोरखपुर में सुनी हुई परंपरा के अनुसार पागलनाथी संप्रदाय के प्रवर्तक पूरनभगत या चौरंगीनाथ हैं। ये राजा रसालू के वैमात्रेय भाई माने जाते हैं। ज्वालामुखी के माननाथ राजा रसालू के अनुयायी बताए जाते हैं, इसलिये कभी कभी माननाथ और उनके अनुवर्ती अर्जुन नागा

या अरजगंगा को भी पागलपंथी मान लिया जाता है, वस्तुतः अरजगंगा नागार्जुन का नामान्तर है। फिर अफगानिस्तान के रावल—जो मुसलमान योगी हैं—दो संप्रदायों को अपने मत का मानते हैं—(१) मादिया और (२) गल। गल को ही पागलपंथी कहते हैं। इस प्रकार इन दोनों शाखाओं से पागलपंथ का संबंध स्थापित होता है। इन लोगों को रावल गल्ला भी कहते हैं। इनका मुख्य स्थान रावलपिंडी में है—जो एक परंपरा के अनुसार पूरनभगत और राजा रसालू के प्रतापी पिता गज की पुरानी राजधानी थी। गजनी के पुराने शासक भी ये ही थे और गजनी नाम भी इनके नाम पर ही पड़ा था। गजनी का पुराना हिंदू नाम 'गजवनी' (?) था। बाद में गज ने स्यालकोट को अपनी राजधानी बनाया था। रावलों का स्थान पेशावर, रोहतक और सुदूर अफगानिस्तान तक में है।

(४) पंख या पंक से निम्नलिखित संप्रदाय संबद्ध माने जा सकते हैं—

१—सतनाथ या सत्यनाथी जिनकी प्रधान गद्दी पुरी में और जिनके अन्य स्थान मेवा थानेश्वर और करनाल में हैं। ये ब्रह्मा के अनुवर्ती कहे जाते हैं।

२—धर्मनाथ—जो कोई राजा थे और बाद में योगी हो गये थे।

३—गरीबनाथ जो धर्मनाथ के साथ ही कच्छ गए थे।

४—हाड़ीभरंग (?)

(५) शिव के पाँचवे संप्रदाय मारवाड़ के 'बन' से किसी शाखा का कोई संबंध नहीं मालूम हो सका।

(६) गोपाल या राम के।

१—संतोषनाथ—ये ही संभवतः इसके मूल प्रवर्तक हों, कौलावलीनिर्णय और श्यामारहस्य के मानव-गुरुओं में मत्स्येंद्रनाथ, गोरक्षनाथ आदि के साथ इनका भी नाम है।

२—जोधपुर के दास; इनसे गोपालनाथियों का संबंध बताया जाता है।

(७) चाँदनाथ कपिलानी—

१—गंगानाथ

२—कायानाथ (परन्तु, आगे देखिए)

३—कपिलानी—अजयपाल द्वारा प्रवर्तित

४—नीमनाथ } दोनों जैन हैं।
५—पारसनाथ }

(८) हेठनाथ—

१—लक्ष्मणनाथ । कहते हैं—ये ही प्रसिद्ध योगी बालानाथ थे। (योग प्रवाह पृ० १८६) इसकी दो शाखाएँ हैं।

२—दरियापंथ—हरद्वार के चंद्रनाथ योगी ने इनको नाटेश्वरी (नाटेसरी) संप्रदाय का माना है और अलग स्वतंत्र पंथ होने में संदेह उपस्थित किया है। परन्तु टिला में उद्भूत स्वतंत्र संप्रदाय के रूप में भी इसकी ख्याति है दरियापंथी साधु क्वेटा और अफगानिस्तान तक में हैं।

३—नाटेसरी—अंबाला और करनाल के हेठ तथा करनाल के बाल जाति वाले इसी शाखा के हैं।

कुछ लोग कहते हैं, रांझा इसी संप्रदाय में थे। डा० बड़थ्वाल के मत से बालानाथ ही बालयती थे, इसलिए उन्हें ही लक्ष्मणनाथ कहते हैं। पंजाब में बाबानाथ का टीला प्रसिद्ध है।

४—जाफर पीर—अपने को ये लोग रांझा और बालकेश्वरनाथ के अनुयायी (या संबद्ध) मानते हैं, इसलिए इनका संबंध नाटेसरी संप्रदाय से जोड़ा भी जा सकता है। कभी-कभी इनका संबंध संतोषनाथ से जोड़ा जाता है। लोग अधिकांश मुसलमान हैं।

(९) आई पंथ के चोलीनाथ—हठयोगप्रदीपिका के घोड़ाचूली सिद्ध से इस संप्रदाय का संबंध होना संभव है। घोड़ाचूली परंपरा के अनुसार गोरखनाथ के गुरु-भाई थे। इनकी कुछ हिंदी रचनाएँ भी मिली हैं।

१—आई पंथ का संबंध करकाई और भूटाई दोनों से बताया जाता है। पागलबाबा के मत से करकाई ने ही आई पंथ का प्रवर्तन किया था। ये दोनों गोरक्षनाथ के शिष्य थे। हरद्वार के आईपंथी अपने को पीर पारसनाथ का अनुयायी बताते हैं। आई देवी (माता) की पूजा करने के कारण ये लोग आईपंथी कहलाए। ये लोग गोरक्षनाथ की शिष्या विमला देवी को अपनी मूल प्रवर्तिका मानते हैं। पहले ये लोग नाम के आगे आई जोड़ा करते थे, नाथ नहीं। पर नरभाई के शिष्य मस्तनाथ जी के बाद ये लोग भी अपने नाम के आगे 'नाथ' जोड़ने लगे।

२—मस्तनाथ—ये लोग 'बाबा' कहे जाते हैं। गलती से कभी 'बाबा' अलग संप्रदाय मान लिया जाता है।

३—आई पंथ (?)

४—बड़ी दरगाह
५—छोटी दरगाह } दोनों ही मस्तनाथ के शिष्य हैं। बड़ी वाले मांस मदिरा नहीं सेवन करते, छोटी वाले करते हैं।

(१०) वैराग पंथ, रतननाथ

१—वैराग पंथ—भरथरी (भर्तृहरि) द्वारा प्रवर्तित

२—भाईनाथ (?) एक अनुश्रुति के अनुसार भाईनाथ—जो अनाथ बालक थे और मेवों द्वारा पाले पोसे गए थे—भरथरी के अनुयायी थे।

३—प्रेमनाथ

४—रतननाथ—भर्तृहरि के शिष्य। पेशावर के रतननाथ ने जो बाह्य मुद्रा नहीं धारण करते थे, कभी टोके जाने पर छाती खोल के मुद्रा दिखा दी थी—ऐसी प्रसिद्ध है। दरियानाथ से भी इनका संबंध बताया जाता है। मुसलमान योगियों में इनका बड़ा मान है। इनके नाम से संबद्ध तीर्थ काबुल और जलालाबाद में भी हैं।

५—कायानाथ या कायमुद्दीन—कायानाथ के शरीर के मल से बना हुआ बालक कायानाथ बाद में चलकर सिद्ध और सम्प्रदाय-प्रवर्तक हुआ।

(११) जैपुर के पावनाथ—

१—जालंधरिपा

२—पा-पंथ (?)

३—कानिपा—गोपीचंद्र इसी शाखा के सिद्ध है। गोपीचंद्र का नाम सिद्ध-संगरी है। सँपेरे इनको अपना गुरु मानते हैं।

४—वामाराग (?)
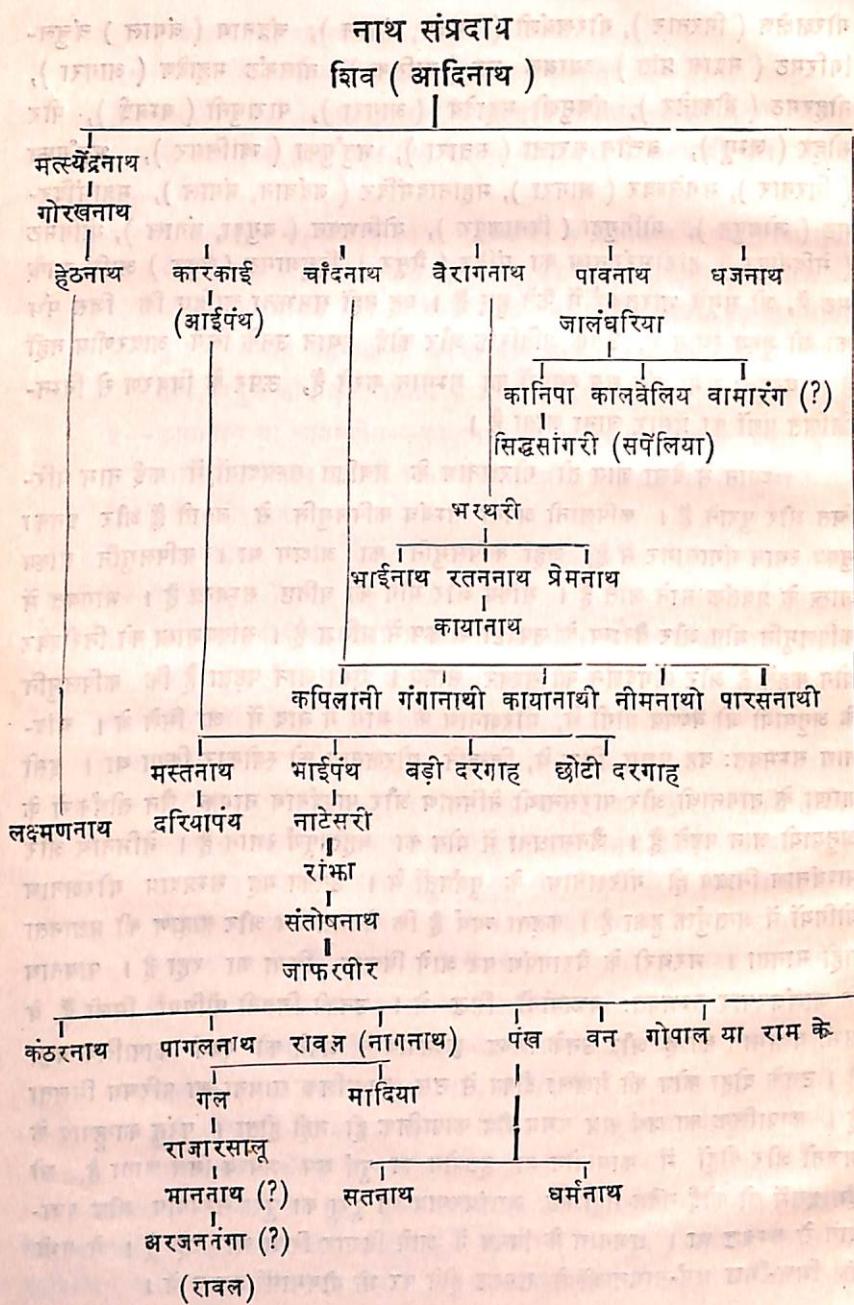
(१२) धजनाथ—

१—धजनाथ महावीर हनुमान् के अनुयायी बताए जाते हैं। प्रसिद्धि है कि सिंहल में जब मत्स्येंद्रनाथ भोगरत थे, उस समय उनका उद्धार करने गोरखनाथ गए थे। उनसे हनुमान् की लड़ाई हुई थी। बाद में हनुमान् को उनका प्रभाव मानना पड़ा था। चौदहवीं शताब्दी के मैथिल ग्रंथ वर्णरत्नाकर में सिद्धों की सूची में 'धज' नामधारी दो सिद्धों का उल्लेख हैं। विविकिधज और मकरधज। प्रसिद्धि है कि मकरध्वज हनुमान् के पुत्र थे। सम्भवतः विविकिधज और मकरधज इस पंथ से सम्बंध हों। कहते हैं इनका स्थान सिंहल या सीलोन में है। परंतु यह भूल है। आगे देखिए। डा० बड़थ्वाल ने लिखा है कि हनुमंत वस्तुतः वक्रनाथ नामक योगी का ही नामांतर है।

ऊपर इन योगियों के मुख्य मुख्य स्थानों का उल्लेख किया गया है। वस्तुतः सारे भारतवर्ष में इनके मठ और अखाड़े हैं। अंगना (उदयपुर) आदि (बंगाल), कादिमठ (कर्नाटक), गंभीरमठ (पूना), गरीबनाथ का टिला (सारमौर स्टेट),

गोरक्षक्षेत्र (गिरनार), गोरखवंशी (दमदम, बंगाल), चंद्रनाथ (बंगाल) चंचुलगिरिमठ (मद्रास प्रांत) त्र्यम्बक मठ (नासिक), नीलकंठ महादेव (आगरा), नोहरमठ (बीकानेर), पंचमुखी महादेव (आगरा), पाराधुनी (बम्बई), पीर सोहर (जम्मू), बत्तीस सराला (सतारा), भर्तृगुफा (ग्वालियर), भर्तृगुफा (गिरनार), मंगलेश्वर (आगरा), महानादमंदिर (बर्दवान, बंगाल), महामंदिरमठ (जोधपुर), योगिगुहा (दिनाजपुर), योगिभवन (बगुड़ा, बंगाल), योगिमठ (मेदिनीपुर), हांड़ीभरंगनाथ का मंदिर (मैसूर), हिंगुआमठ (जैपुर) आदि इनके मठ हैं, जो समूचे भारतवर्ष में फैले हुए हैं। यह नहीं समझना चाहिए कि जिस पंथ का जो मुख्य स्थान है, उसके अतिरिक्त और कोई स्थान उनके लिये आदरणीय नहीं है। वस्तुत: सभी पंथ सब स्थानों का सम्मान करते हैं, ऊपर के विवरण से निम्नलिखित पंथों का प्रसार जाना जाता है।

ध्यान से देखा जाय तो गोरक्षनाथ के प्रवर्तित सम्प्रदायों में कई नाम परिचित और पुराने हैं। कपिलानी अपना सम्बंध कपिलमुनि से बताते हैं और इनका मुख्य स्थान गंगासागर में है, जहाँ कपिलमुनि का आश्रम था। कपिलमुनि सांख्य शास्त्र के प्रवर्तक माने जाते हैं। सांख्य और योग का घनिष्ठ सम्बन्ध है। भागवत में कपिलमुनि योग और वैराग्य के उपदेष्टा के रूप में प्रसिद्ध है। सांख्यशास्त्र को निरीश्वर योग कहते हैं और योगदर्शन को सेश्वर सांख्य। ऐसा जान पड़ता है कि कपिलमुनि के अनुयायी जो वैष्णव योगी थे, गोरक्षनाथ के मार्ग में बाद में आ मिले थे। चांदनाथ सम्भवत: वह प्रथम सिद्ध थे, जिन्होंने गोरक्षनाथ को स्वीकार किया था। इसी शाखा के नागनाथी और पारसनाथी नेमिनाथ और पार्श्वनाथ नामक जैन तीर्थंकरों के अनुयायी जान पड़ते हैं। जैनसाधना में योग का महत्वपूर्ण स्थान है। नेमिनाथ और पार्श्वनाथ निश्चय ही गोरक्षनाथ के पूर्ववर्ती थे। उनका यह सम्प्रदाय गोरक्षनाथ योगियों में अन्तर्भुक्त हुआ है। कहना व्यर्थ है कि जैनमत वेद और ब्राह्मण की प्रधानता नहीं मानता। भरथरी के वैरागपंथ पर आगे विचार किया जा रहा है। पावनाथ के जालंधरपाद सम्भवत: वज्रयानी सिद्ध थे। उनकी जितनी पोथियाँ मिली हैं, वे सभी वज्रमान की हैं और उनके शिष्य कृष्णपाद ने अपने को स्वयं कापालिक कहा है। उनके दोहा कोष की मेखला टीका से उस कापालिक साधना का परिचय मिलता है। कापालिक का अर्थ सब समय शैव कापालिक ही नहीं होता। परंतु कान्हूपाद के भजनों और दोहों में कायायोग या हठयोग का पूर्व रूप अवश्य मिल जाता है, जो हो, इसमें तो कोई संदेह नहीं कि जालंधरपाद का पूरा का पूरा सम्प्रदाय बौद्ध वज्रयान से सम्बद्ध था। धजनाथ के विषय में आगे विचार किया जा रहा है। ये सभी पंथ भिन्न-भिन्न धर्म-साधनाओं से सम्बद्ध होने पर भी योगमार्गी अवश्य थे।

नाथ संप्रदाय
शिव (आदिनाथ)
मत्स्येंद्रनाथ
गोरखनाथ
हेठनाथ
कारकाई
(आईपंथ)
चाँदनाथ
वैरागनाथ
पावनाथ
धजनाथ
जालंधरिया
कानिपा
कालवेलिय
वामारंग (?)
सिद्धसांगरी (सर्पेलिया)
भरथरी
भाईनाथ
रतननाथ
प्रेमनाथ
कायानाथ
कपिलानी
गंगानाथी
कायानाथी
नीमनाथी
पारसनाथी
मस्तनाथ
भाईपंथ
बड़ी दरगाह
छोटी दरगाह
लक्ष्मणनाथ
दरियापंथ
नाटेसरी
रांभा
संतोषनाथ
जाफरपीर
कंठरनाथ
पागलनाथ
रावल (नागनाथ)
पंख
वन
गोपाल या राम के
गल
मादिया
राजारसालू
माननाथ (?)
सतनाथ
धर्मनाथ
अरजननंगा (?)
(रावल)

आई पंथ वाले विमलादेवी के अनुयायी माने जाते हैं। आई अर्थात् माता। ये लोग अपने नाम के सामने नाथ नाम जोड़कर आई जोड़ा करते थे। करकाई और भूष्टाई का वस्तुतः नाथपंथी नाम कर्कनाथ और भूष्टनाथ (शंभुनाथ ?) होना चाहिए। माता की पूजा देखकर अनुमान होता है कि ये किसी शाक्त मत से गोरक्षनाथ के योगमार्ग में अन्तर्भुक्त होंगे। विमलादेवी गोरक्षनाथ की शिष्यता बताई जाती है, परंतु नित्याह्निकतिलक में एक महाप्रभावशालिनी सिद्धा विमलादेवी का नाम है, जो मत्स्येंन्द्रनाथ की मतानुवर्तिनी रही होंगी। उन्होंने गोरक्षनाथ से दीक्षा भी ली हो तो आश्चर्य नहीं। हस्तिनापुर में कोई वैश्य जाति के सेठ थे, नाम था शिवगण। उनकी पुत्री का नाम बिंबदेवी था। गुप्तनाम श्री गुप्तदेवी था। एकबार भेरी के शब्द से इन्होंने बौद्धों को वित्रासित किया। तब से इनकी कीर्ति का नाम बौद्धत्रासिनी (बोधत्रासनी) माता पड़ गया। जब उनका जन्म हुआ तो स्त्री रुप में उत्पन्न हुई थीं, पर अधिकार-काल में पुरुष मुद्रा में दिखीं और बलपूर्वक अधिकार दखल किया। परंतु पशु लोग (पाखंडी) उन्हें स्त्री रुप में ही देखते थे। इनके दस नाम हैं—

विमला च शिखा चैव त्रिवेदी (च) सुशोभना,
नागकन्या कुमारी वंधारणी पयोधारणी,
रक्षाभद्रा समाख्याता देव्या नामानि वै दश,
नामान्येतानि यो वेत्ति सोपि कौलाहो (ह्वयो ?) भवेत् ॥

यह कह सकना कठिन है कि यही विमलादेवी आईपंथ की पूजनीया विमलादेवी हैं या नहीं।

स्पष्ट ही, गोरक्षनाथ द्वारा प्रवर्तित कहे जानेवाले पंथों में पुराने सांख्य योगवादी, बौद्ध, जैन, शाक्त सभी हैं। सब की एकमात्र सामान्यधर्मिता योगमार्ग है।

शिव के द्वारा प्रवर्तित सम्प्रदाय भी गोरक्षनाथ के पूर्ववर्ती होने चाहिएँ। इन्हें स्वीकार करके भी गोरक्षनाथ ने जब अपने नाम से इन्हें नहीं चलाया तो कुछ न कुछ कारण होना चाहिए। मेरा अनुमान है कि ये लोग मंत्र-तंत्र तो करते होंगे, पर हठयोग की सिद्धियों से कोई सम्बन्ध नहीं रखते होंगे। यह लक्ष्य करने की बात है कि शिव द्वारा प्रवर्तित कहे जानेवाले सम्प्रदायों का प्रसार अधिकतर काश्मीर, पश्चिमी पंजाब, पेशावर और अफगानिस्तान में है, जहाँ अत्यन्त प्राचीनकाल से शैवमत प्रबल था। ज्ञान की वर्तमान अवस्था में इससे कुछ अधिक कहना सम्भव नहीं है।

प्रस्तुत संग्रह के सिद्ध

इस संग्रह में निम्नलिखित नाथ सिद्धों की बनियाँ संगृहीत हुई हैं।

(१) अजयपाल जी
(२) काणेरी (सती, पाव)
(३) गरीबजी
(४) गोपीचन्द्र जी
(५) घोड़ाचौली
(६) चरपटनाथ
(७) चौरंगीनाथ
(८) चौणकनाथ (चुणकर नाथ)
(९) जलन्ध्री पाव
(१०) दत्त जी (दतात्रेय)
(११) देवल जी
(१२) धूंधलीमल जी
(१३) नागाअर्जन जी
(१४) पार्वती जी
(१५) पृथ्वीनाथ जी
(१६) बालनाथ जी
(१७) बालगुन्दाई
(१८) भरथरी
(१९) मच्छेन्द्र नाथ जी
(२०) महादेव जी
(२१) रामचन्द्र जी
(२२) लषमण जी
(२३) सतवंती जी
(२४) सुकुल हंस जी
(२४) हणवन्तजी

इनमें महादेव-पार्वती और रामचन्द्र जी के नाम से प्राप्त रचनाओं के वास्तविक रचयिता कौन हैं, यह कहना कठिन है। इन पदों में किसी सिद्ध ने इन देवताओं के उपदेश देशी भाषा में लिख लिए होंगे, शेष में से कुछ का पता विविध स्रोतों से चल जाता है। कुछ सिद्धों के बारे में बहुत-कुछ निश्चय रुप से कहा जा सकता है कि वे गोरखनाथ के समसमायिक रहे होंगे। मच्छिंद्र नाथ तो उनके गुरु ही थे, शेष में से चौरंगीनाथ, नागार्जुन, चुणकरनाथ और चरपटीनाथ के बारे में जो सूचना प्राप्त है, उनके आधार पर इन्हें गोरखनाथ का समसामयिक या थोड़ा परवर्ती माना जा सकता है।

(१) **चौरंगीनाथ**—तिब्बती परंपरा में ये गोरक्षनाथ के गुरुभाई माने गए हैं। इस संग्रह में उनकी 'प्राण-संकली' नामक रचना प्रकाशित की जा रही है। इससे पता चलता है कि ये राजा सालवाहन के पुत्र मच्छिन्द्रनाथ के शिष्य और गोरखनाथ के गुरुभाई थे। यह भी पता चलता है कि इनकी विमाता ने इनके हाथ पैंर कटवा दिए थे। पंजाब की लोककथाओं के पूरनभगत से अभिन्न माने जाते हैं। चौरंगीनाथ की प्राणसंकली की भाषा आरंभ में पूर्वी है, जो बाद में चलकर राजस्थानी-मिश्रित हो जाती है। इस पद से अनुमान किया जा सकता है कि वे पूर्वी प्रदेश के रहनेवाले थे। पूरनभगत की कथा से इनके जीवन की घटनाओं का साम्य देखकर कदाचित् दोनों को एक समझ लिया गया हो।

(२) **नागार्जुन**—महायान के मत के प्रसिद्ध नागार्जुन से यह भिन्न थे। अल-बेरूनी ने लिखा है कि एक नागार्जुन उनसे लगभग सौ वर्ष पहले वर्तमान थे। साधन-माला में ये कई साधनाओं के प्रवर्तक माने गए हैं। इन साधनाओं से ये शबरपाद और कृष्णाचार्य के समसामयिक सिद्ध होते हैं। प्रबंध चिंतामणि में पादलिप्त सूरि के शिष्य एक नागार्जुन की कथा है। यह कहना कठिन है कि ये नागार्जुन नाथ सिद्ध नागार्जुन से अभिन्न थे या नहीं। परवर्ती हिंदी पुस्तकों में नागाअरजंद और नागा-अजंन नाम से इन्हीं का उल्लेख है। ऐसा जान पड़ता है कि नाथ सिद्ध नागार्जुन गोरखनाथ के थोड़े ही बाद हुए थे। नागनाथ नाम के सिद्ध बारहवीं शताब्दी में हुए हैं। कभी कभी नागार्जन और नागनाथ को एक ही मान लिया गया है।

(३) **चुणाकरनाथ**—डा० बड्थ्वाल ने इन्हें गोरखनाथ का समसामयिक और चरपटनाथ का पूर्ववर्ती सिद्ध माना है (योग प्रवाह पृ० ७२)।

(४) **चरपट या चरपटीनाथ**—ये गोरखनाथ से थोड़ा परवर्ती जान पड़ते हैं। वज्रयानी सिद्धों में भी इनका नाम आता है। तिब्बती परंपरा में इन्हें मीनपा का गुरु माना गया है। नाथपरंपरा में इन्हें गोरखनाथ का शिष्य कहा जाता है। इनके नाम से प्रचलित बानियों में रस-विषयक इनके ज्ञान का पता चलता है। एक पद में इन्होंने अपने को गोपीचंद का गुरुभाई कहा है। ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि आरंभ में ये रसेश्वर-संप्रदाय में थे और बाद में गोरखनाथ के प्रभाव में आ गए।

काणेरी—इस संग्रह में काणेरी के कई पद हैं, कुछ लोग कानफा और काणेरी को एक ही सिद्ध मानते हैं। योगि-संप्रदाय विष्कृति में कृष्णपाद को ही कर्णरिपा या काणेरीनाथ कहा गया है। किंतु प्रेमदास ने अपनी सिद्धवंदना में इन दोनों को अलग-अलग सिद्ध समझा है। जान पड़ता है काणेरी के दीर्घ ईकारांत रुप को देख-कर परवर्ती काल में इन्हें स्त्रीसिद्ध मान लिया गया है। इनके नाम से पाए जाने वाले पद एक प्रति में सती काणेरी के नाम से मिलता है तो दूसरी प्रति में काणेरी पाव के नाम से कृष्णपाद, कान्हूपा, कानफा आदि नामों को मैंने एक ही माना है और उनके विषय में नाथ संप्रदाय नामक पुस्तक में विस्तार से लिखा है। ये जालंधर पाद के शिष्य थे और गोरक्षनाथ के समसामयिक थे। चर्यापदों में इनके गान मिलते हैं और उन्होंने स्वयं अपने को कापालिक कहा है। वर्तमान नाथ पंथ में इनके नाम का एक उपसंप्रदाय (वामारग, वाममार्ग) आज भी जीवित है, परंतु उसे आधा संप्रदाय हो माना जाता है। इनके दोहों का एक संग्रह दोहाकोष नाम से हरप्रसाद शास्त्री ने छपाया था, उस पर मेखला नामक संस्कृत टीका भी मिलती है, जो संभवतः इनकी शिष्या मेखला की लिखी हुई है।

जालंधरीपाव—(जलंध्रीपाव) ये उपर्युक्त सिद्ध कृष्णपाद के गुरु थे। ऊपर इनकी चर्चा हो चुकी है। नवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में ये वर्तमान थे। राजा गोपीचंद्र की माता मयनामती इनकी शिष्या थीं। माता के कहने से ही राजा गोपीचंद्र ने इनसे दीक्षा ली थी।

गोपीचन्द्र—गोपीचन्द्र या राजा गोविन्दचन्द्र जालंधर के नाथ के शिष्य बताए जाते हैं। माता के उपदेश से इन्होंने अपनी दो सुन्दरी रानियों—उदुना और पुदुना (उदयिनी और पद्मिनी)—को छोड़कर वैराग्य लिया था। रानि ने इन्हें फिर से गृहस्थ धर्म में प्रवेश करने का आग्रह किया था, परंतु ये वैराग्य में दृढ़ रहे। गोपीयंत्र या सारंगी के ये ही आविष्कर्ता माने जाते हैं।

भरथरी—भर्तृहरि का प्राकृत रुप है। भर्तृहरि संस्कृत साहित्य में बहुत परिचित है। उनके तीन शतक काव्य-मर्मज्ञों के हृदय-हार बने हुए हैं। वाक्यपदीय नामक व्याकरण ग्रंथ के भी ये रचयिता माने जाते हैं। सम्भवतः ये सन् ईस्वी की सातवीं शती के पूर्व वर्तमान थे, क्योंकि इतसिंग नामक चीनी यात्री ने जो ६७८-६९५ ई० तक बौद्ध देशों का भ्रमण करता रहा, इनके नाम और ग्रंथों से परिचित था। ह्वेनत्सांग ने भी इनकी चर्चा की है और इन्हें बौद्ध बताया है। परंतु इनके ग्रंथों को देखने से ये शैव ही जान पड़ते हैं। छठी-सातवीं शताब्दी की लोकभाषा के अन्य कवियों के लिखे हुए जो नमूने प्राप्त हैं, उनसे मिलान करने पर प्रस्तुत संग्रह में भरथरी के नाम से संगृहीत पदों की भाषा आर्वाचीन मालूम होती है। जान पड़ता है कि भर्तृहरि ने लोकभाषा में कुछ पद लिखे थे, जिनकी भाषा क्रमशः बदलती गई। नाथमार्ग में अनेक पुराने सम्प्रदायों के अंतर्भुक्त हो जाने के बाद भर्तृहरि के ये पद भी नाथसिद्धों के संग्रहों में गृहीत हो गए, पर उनकी भाषा बहुत बदल गई। हमारे संग्रह में उनका जो रूप उपलब्ध है, वह पन्द्रह शताब्दी के पहले का नहीं हो सकता।

वैराग्यशतक के कई श्लोक अत्यंत भ्रष्ट रूप से संगृहीत हैं। इनके भ्रष्ट रूप को देखकर कदाचित् भाषा-विशेषज्ञों को कोई नयी बात सूझ जाय, इस आशा से उन्हें ज्यों का त्यों संग्रह कर दिया गया है।

अजयपाल—(अजैपाल) डा० बड़थ्वाल ने इन्हें गढ़वाल का राजा माना है। इनकी रचनाओं में 'दीवान' पद मुसलिम दरबार के दीवानों की याद दिलाता है। 'तम्बा' (तम्बू कैम्प) भी इस अनुमान की पुष्टि करता है कि वे मुसलिम काल में ही पैदा हुए थे। पं० हरिकृष्ण रतूड़ी का मत है कि राजा अजयपाल ने ही राज-राजेश्वरी और सत्यनाथ दोनों मंदिरों की स्थापना सम्वत् १५१२ के लगभग की, जब राजधानी चांदपुर से हटाकर देवलगढ़ में स्थापित हुई (योग प्रवाह पृ० २०२) इस प्रकार अजयपाल का समय पन्द्रहवीं शताब्दी में होना चाहिए। बड़थ्वाल जी का

कहना है कि ये राजा थे, इसका एक प्रमाण यह है कि नाथसिद्धों में सिर्फ तीन ऐसे हैं, जिन्हें नाथ या पाव जैसे आदरार्थक विशेषण सहित नहीं स्मरण किया गया। भरथरी, गोपीचंद और अजैपाल। प्रथम दो राजा थे, इसलिये ये भी राजा रहे होंगे। परंतु इसके विपरीत यह भी कहा जा सकता है कि जिस प्रकार भरथरी, और गोपीचंद को स्पष्ट रूप से राजा कहा गया है, उस प्रकार अजैपाल को नहीं कहा गया, बल्कि 'बाबा अजयपाल' कहा गया है। इसलिये उनका राजा होना निश्चित नहीं है। मुझे बड़थ्वाल जी के मत में विशेष सार नहीं दिखाता, किंतु इतना निश्चित जान पड़ता है कि ये चौदहवीं शताब्दी के बाद ही हुए होंगे। वर्णरत्नाकर की सूची में इनका नाम नहीं है।

लक्ष्मण या लक्ष्मणनाथ,—बालनाथ, बालगुंदाई भी इन्हीं के नाम जान पड़ते हैं। अजयपाल की शबदी में एक पद इस प्रकार आता है।

"लषमण कहे हो बाबा अजयपाल तुम कुण आरंभ थीरं"

इससे अनुमान होता है कि लषमण (लक्षमणनाथ) के ये गुरु थे।

परंपरा से प्रचलित है कि लषमणनाथ का ही नाम बालनाथ या बालापीर था।

नाथ सम्प्रदाय में जो आईपंथ गोरक्षनाथ की शिष्या विमलादेवी द्वारा प्रवर्तित माना जाता है, उसी सम्प्रदाय में थे। इनका पूरा नाम बालगोविंद है। आईपंथ वाले अपने नाम के साथ आई जोड़ते हैं। इसलिये इनका नाम बालगोविंददाई पड़ा, जिसका संक्षिप्त रूप बालगुंदाई हुआ सम्भवतः ये तेरहवीं शताब्दो में वर्तमान थे। और करकाई और भूष्टाई के थोड़े परवर्ती थे। बालनाथ, लक्षमण नाथ और बालगुंदाई के नाम से पाए जाने वाले कई पद समान हैं। इससे अनुमान किया जा सकता है कि ये तीनों नाम एक ही सिद्ध के हैं।

हणवंत जी—इनके बारे में कुछ निश्चित नहीं मालूम। लेकिन ये धज सम्प्रदाय के प्रवर्तक माने जाते हैं। इनके दो शिष्य मगरधज और विविकिधज (मकरध्वज और विवेकजध्वज) वर्णरत्नाकर की सिद्ध सूची में मिल जाते हैं। इससे अनुमान किया जा सकता है कि ये चौदहवीं शताब्दी के पहले ही हो चुके थे। रामभक्त हनुमान् जी के साथ इनको अभिन्न मान लिया गया है, जो नाम-साम्य के कारण उत्पन्न भ्रांति मात्र है। इनके नाम से प्राप्त पदों में कुछ पद थोड़ा बदलकर कबीरदास के नाम पर भी चलते हैं। इससे भी यह सिद्ध होता है कि ये कबीरदास के पूर्ववर्ती थे।

हणवंत की बानियों में पूर्वी भाषा के लक्षण दिखते हैं। ऐसा जान पड़ता है कि ये किसी पूर्वी प्रदेश के सिद्ध थे।

घोड़ाचोली—हठयोग प्रदीपिका में जिन सिद्धों को कालदंड का खंडन करनेवाला बताया गया है, उनमें घोड़ाचौली का भी नाम है। आईपंथ के प्रसिद्ध सिद्ध

चोलीनाथ ये ही जान पड़ते हैं। इस प्रकार ये चौदहवीं शताब्दी से बहुत पहले उत्पन्न हुए होंगे, ऐसा अनुमान किया जा सकता है। इनका समय सन् ईस्वी की बारहवीं शताब्दी के पूर्व माना जा सकता है। इस संग्रह में इनकी जो बानियाँ संगृहीत हैं, उनमें रावल, पागल, वनखंडी, आई पंथ, पंखि (पंक) धूज या धज, गोपाल, इन पंथों की चर्चा है। इससे जान पड़ता है कि इन पंथों के आविर्भाव के बाद ही ये हुए होंगे। अपनी सबदी में इन्होंने अपने को मछींद्र का दास कहा है।

धूधली मल और गरीबनाथ—"मुँहणोत नैणसीरी ख्यात" में बताया गया है कि ये गरीबदास के गुरु थे। लाखड़ी से १२ कोस की दूरी पर धीणोद है। वहाँ के अजयसर पर्वत पर धूंधलीमल रहते थे। इन्हीं के शिष्य गरीबनाथ थे। इनके आशीर्वाद से भीम कच्छ का राजा हुआ था। इनके शिष्य गरीबनाथ के शाप से घोघों का राज्य नष्ट हुआ था। प्रभासपाटन के एक शिलालेख से जाड़ेचा भीम का समय सम्मत् १४४२ (१३८७ ई०) है, इसलिये धूँधलीमल और गरीबनाथ का समय भी ईसवी सन् भी चौदहवीं शती का उत्तरार्ध होना चाहिए।

दत्तजी—दत्तजी दत्तात्रेय का विकृत रूप है। दत्तात्रेय की संस्कृत रचनाएँ प्रसिद्ध ही हैं, ऐसा जान पड़ता है कि किसी कम पढ़े लिखे साधु ने संस्कृत श्लोकों को बुरी तरह बिगाड़कर और उनमें अपनी रचना जोड़कर चला दिया है, सम्भवतः इन पदों के लेखक पंद्रहवीं शताब्दी में हुए थे, क्योंकि 'रोजी' रोजा' जैसे शब्द इन रचनाओं में प्राप्त होते हैं।

देवलनाथ—ये गरीबनाथ के पूर्ववर्ती थे। इनके विषय में विशेष कुछ नहीं मालूम है।

पृथ्वीनाथ—ये कबीर के परवर्ती थे, क्योंकि इनकी रचनाओं में कबीर का नाम आता है। इस प्रकार ये सोलहवीं शताब्दी के आस-पास हुए होंगे।

परबत सिद्ध—नाथ योगियों की प्राप्त वाणियों में नामों की विचित्र तोड़ मरोड़ है। कभी कभी एक ही नाम को उच्चारण-विकृति के कारण भिन्न-भिन्न मान लिया गया है। ऐसा जान पड़ता है कि परबत सिद्ध (जो निश्चित रूप से चौदहवीं शताब्दी के पूर्ववर्ती हैं,) बाद में उसी प्रकार 'पार्वती' या 'पारबती' बना दिए गए, जिस प्रकार काणेरी पाव 'सती काणेरी' हो गए। इसका एक कारण यह है कि 'परबत' शब्द का तृतीयान्त या सप्तम्यन्त पुराना रूप 'परबति' होता है। बाद में इस इकार ने इस सिद्ध को स्त्री सिद्ध समझने की भ्रान्ति पैदा की। इस संग्रह में परवत सिद्ध का एक भूगोल पुराण दिया हुआ है। यह 'पुराण' पंजाब के एक सज्जन ने भेजा था। गुरु नानक द्वारा रचित बताई जानेवाली प्राणसंकली (तरन तारन से प्रकाशित) में यह हूबहू इसी रूप में है। इसलिये इसके रचयिता के बारे में सन्देह

होता है। परंतु यह काफी पुरानी भाषा है। इस में संदेह नहीं। इससे खड़ी बोली का एक पुरना रूप प्राप्त होता है। इसके इसी महत्त्व को देखते हुए सन्देहास्पद होने के कारण इसे परिशिष्ट में दे दिया गया है।

सुकुल हंस और सतवंती के बारे में कुछ मालूम नहीं।

इस प्रकार इस संग्रह में जिन नाथसिद्धों की वाणियाँ संगृहीत हैं, उनमें से अधिकांश चौदहवीं शताब्दी (ईसवी) के पूर्ववर्ती हैं। कुछ चौदहवीं शताब्दी के हैं और बहुत थोड़े उसके बाद के। भाषा की दृष्टि से इन पदों का महत्त्व स्पष्ट है। यद्यपि इन वाणियों के रूप बहुत कुछ विकृत हो गए हैं, परंतु भाषा का कुछ न कुछ पुराना रूप उनमें रह गया है। खड़ी बोली का तो इन पदों में बहुत अच्छा प्रयोग हुआ है। खड़ी बोली के धाराप्रवाहिक प्रयोग का नया स्रोत इन पदों में पाया जाएगा।

काशी
वैशाख पूर्णिमा, सं० २०१४ } हजारीप्रसाद द्विवेदी

नाथ सिद्धों की बानियाँ

अथ सिध बंदनां लिष्यते[1]

प्रेमदास लिखित

नमो नमो निरंजनं भरम को विहंडनं। नमो गुरदेवं आगम पंथ भेवं ॥ १ ॥
नमो **आदिनाथं** भए हैं सुनाथं। नमो सिध **मछिन्द्रं** बड़ो जोगिन्द्रं ॥ २ ॥
नमो **गोरष** सिधं जोग जुगति बिधं। नमो **चरपटरायं** गुरू ग्यान पायं ॥ ३ ॥
नमो **भरथरी** जोगी ब्रह्मरस भोगी। नमो **बालगुंदाई** कीयौ क्रम षाई ॥ ४ ॥
नमो **पृथीनाथं** सदा नाथ हाथं। नमो **हांडीभड़ंगं** कीयौ क्रम षंडं ॥ ५ ॥
नमो **ठीकरनाथं** सदा नाथ साथं। नमो सिध **जलंधरी** ब्रह्म बुधि संचरी ॥ ६ ॥
नमो **कान्हीपायं** गुरु सबद भायं। नमो **गोपीचंदं** रमत्त ब्रह्म नंदं ॥ ७ ॥
नमो **औघड़देवं** गोरष सबद लेवं। नमो **बालनाथं** निराकार साथं ॥ ८ ॥
नमो **अजैपालं** जीत्यौ जमकालं। नमो **हनूमान** निरंजनं पिछानं ॥ ९ ॥
नमो **नरसिहदेवं** अलष अभेवं। नमो **हालीपावं** निरालंब ध्यावं ॥१०॥
नमो **मुकंद भारथी** निरंजन स्वारथी। नमो **मालीपावं** बिमल सुध भावं ॥११॥
नमो **मीडकीपावं** निरंतर सुभावं। नमो सिध **हरताली** कालं कंठ कटाली ॥१२॥
नमो सिध **काणेरी** लीयौ मन फेरी। नमो **घूंधलीमलं** अबीह अकलं ॥१३॥
नमो **भुरकट** नामं रमत रांम रामं। नमो सिध **टनटनी** लागी अनह धुधुनी ॥१४॥
नमो सिध **चौरंगी** प्रम जोति संगी। नमो **कंथड़पायं** नही मोह मायं ॥१५॥
नमो **विध** सिधं लीयौ मन उरधं। नमो सिध **कपाली** नही चित चाली ॥१६॥
नमो **कागभुसंडं** त्रिबधि साप षंडं। नमो **काग चंडं** कल्पना बिहंडं ॥१७॥
नमो **वीर पछि** उदै ग्यान लछि। नमो **सूरानंद** प्रकृति निकंदं ॥१८॥
नमो **भैरू नंदं** रहै नृदंदं। नमो **सांवरा नंदं** पूरण कला चंदं ॥१९॥
नमो **चुणकरनाथं** अगम पंथ पंथं। नमो **पूरण धीरं** भरो अनभै सरीरं ॥२०॥
नमो **आत्मांरामं** प्रम सुनिधामं। नमो **गरीब सिधं** गुरू सतद बिधं ॥२१॥

---

१. प्रति से

नमो भड़ंग नाथं पकड़ि नाथ हाथं । नमो दड़गड़ नाथं सदा जाके साथं ॥२२॥
नमो देवदत्तं मिलित तत्त तत्तं । नमो सुषदेवं अलष अभेवं ॥२३॥
नमो सिध चौरासी विग्यानं प्रकासी । नमो नौ जोगेस्वरं राते प्रमेस्वरं ॥२४॥
नमो कपलदेवं लह्यौ ब्रह्म भेवं । नमो सनक सनंदन करम काल षंडन ॥२५॥
नमो हस्तामलं सुतै सिध अमलं । नमो अष्टावक्रं नही काल चंक्रं ॥२६॥
नमो रामानंदं नही काल फंदं । नमो कबीर कान्हं नृमल सुध ग्यानं ॥२७॥
नमो दास कमालं भरो ब्रह्म लालं । नमो हरीदासं कीयौ ब्रह्म वासं ॥२८॥
नमो महरवानं निरंजन ध्यानं । नमो ध्रू प्रहलादं अगम अगाधं ॥२९॥
नमो नाम पीया प्रगट सप्त दीया । नमो सरब साधं अगम अगाधं ॥३०॥

दोहा—काम दहन कलिमल हरन । अरि गंजन भव भंजनं ॥
अनंत कोटि सिध साधनैं । प्रेमदास करि बंदनं ॥३१॥
सिध बंदना जो पढ़ै । संध्या अर फुनि प्रात ॥
रोम रोम पात्तिग झड़ै । तिमर अंध मिटि जात ॥३२॥
सिध साधनैं बंदनां । निति प्रति करै जो संत ॥
प्रेम कहै सहजही । दरसै जोति अनंत ॥३३॥

॥ इती सिध बंदना संपूर्ण ॥

अथ दत्त असतोत्रं

शंकराचार्य विरचित

जटा जूट विभूति भूषनं । नष सष अषिडतं ॥
विस रज नव देह लीला । सोहं दत्त डिगंबरं ॥ १ ॥३४॥
मुकुट केस वसेष बनिता । बचन श्री मुष अमृतं ॥
सम्रथं सब जोग सम्रथ । सोहं दत्त डिगंबरं ॥ २ ॥३५॥
अलिप बक्ता सुलिप निंद्रा । भोजन सुष संजमं ॥
उद्र पात्र निमष मात्र । सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ३ ॥३६॥
पात्र पवीत्र बिचत्र बांनी । वेद व्याकरण पंडिता ॥
ग्यान अंजनं सभा मंडनं । सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ४ ॥३७॥
भेष टेक विचित्रक । लोभ अवधि न लीयंतं ॥
निगन रूप निरास निहचै । सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ५ ॥३८॥

सिध रूप निसंक नृभै । निडर निसपति उतमनी ॥
जोति रूप प्रकास पूरन । सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ६ ॥३९॥

बीत रागी तरक त्यागी । लक्षत लछ समागमं ॥
ऐका ऐकी निरापेषी । सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ७ ॥४०॥

उग्र तेज अंकूर नूरं । सूर बीर पराक्रमं ॥
अग्म अनाहद अपार बानी । सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ८ ॥४१॥

सत सील संतोष धारण । सुमरिणं सत सुमरणं ॥
संसार भोजल तिरण तारण । सोहं दत्त डिगंबरं ॥ ९ ॥ ४२ ॥

बाघंबरं नटाटंबरं । चीतांबरं पीतांबरं ॥
पहरै पाट पटंबरं । तजि धरती ऊपर अंबरं ॥
सोहं दत्त डिगम्बरं ॥ १० ॥ ४३ ॥

॥ इती श्री संक्राचारय्य विरंच्यते दत्त अस्ता ॥

अजैपालजी की सबदी

मुंड़े मुंड़े भेष बितुंडे[1] । नां बूझी सत गुर बाणीं ॥
सुंनि[2] सुंनि करि भूले पसुवा । आपा सुध[3] न जांणी ॥ १ ॥ ४४ ॥
नाभि सुंनि तैं पवनां ऊठ्या[4] । परम[5] सुंनि मैं पैसा[6] ॥
तिहि सुंनि तैं[7] पिंड[8] ब्रह्मण्ड उपज्या । ते सुंनि[9] है कैसा ॥ २ ॥ ४५ ॥
तिह[10] सुंनि तैं आपा कीधा[11] । आपा कूंण[12] सूं[13] कीधा ॥
सुंनि लागे ते मरि मरि गए । आप अनन्त सिध सीधा ॥ ३ ॥ ४६ ॥
पिंड तै ब्रह्मण्ड ब्रह्मण्ड तैं पिंड । पिंड ब्रह्मण्ड कथ्या न जाई ॥
पिंड ब्रह्मण्ड दोऊ सम कर । पिंड ब्रह्मण्ड समाई ॥ ४ ॥[14] ४७ ॥
पृथ्वी के तत महल रचीला । आप कै तत करी आचारं ॥

१—ख. मूंडत मूंडे भेष बिटंवे; २—ख. सुयं; ३— ख. सुधि; ४—ग. ऊठा; ५—ग. प्रम; ६—ख. पैठा; ७—ख. रयूं; ८—ख. षंड; ९—ख. सुना; १०—ख. तीनि; ११—ख. कीया; १२—ख. कौण; १३—ख. स्यूं;

१४—यह पूरा पद ख. प्रति में इस प्रकार है:—

प्यंड थैं ब्रह्मांड । प्यंड कथ्या नहीं जाई ॥
प्यंड ब्रह्मांड दोउ समि करैं । प्यंड मैं ब्रह्मांड समाई ॥ ४ ॥

तेज कै तत दीपग बालिबा । बाई कै तत हम करिबा बिचारं ॥ ५ ॥[१] ४८ ॥
आकास का तंबा मैं करीबा । मलिबा[२] मन राई का मानं ॥
सुंनि स्यंघासण[३] उलोचा । बैसिबा प्रान पुरिस क[४] दीवानं ॥ ६ ॥ ४९ ॥
जुरा मरन काल सरब व्यापै । काम बसंत सरीरं ॥
लषमण कहै हो बाबा अजैपाल । तुम कूंण अरम्भ थीरं ॥ ७ ॥[५] ५० ॥
ब्रह्म अ गनिब जरांग[६] सी क्या । कंदप देव शरीरं ॥
जुरा मृत[७] पवन का भीषण । जोगारंभ सुथोरं[८] ॥८॥५१॥
द्वादस गगन स्थानं । सोषि लीया जल मालं ॥
षट चक्रा जोग धरि बैठा । तब भाजि गया जम कालं ॥९॥[९]५२॥

सती काणेरी जी का पद

आछै आवै मही मंडल । कोई सू रां मनवानै रे लो ।
देवता दाणां पापी मनवै ग्रस्यो । कोइ सुराहो गहि ल्यावै रे लो ॥टेक॥५३॥
कबहू क मनवौ म्हारौ जती रे सन्यासी । कबहू क मैंगल मातौ रे लौ ।
कबहू क मनवौ म्हारौ उंनथि गोधलो । कबहू क बिषीया रंगि रातौ रे लो ॥१॥५४॥
कबहू क मनवौ म्हारौ माया त्यागै । कबहू क बहुरि मंगावै रे लो ।
कबहू क मनवौ म्हारौ मनसा भोगी । कबहू क अभष भषावै रे लो ॥२॥५५॥
इही तौ बांध्या जोगी जती रे नथाइला । जब लग मनवा नही बाध्या रे लौ ॥
पांहण पाहू लोहड़ै गडीला । तेहू काल सिषा धारे लौ ॥३। ५६॥

१—यह पद्य ख. प्रति में इस प्रकार है :—
पृथी कै तत रचीला । आप कै भरीले भंडारं ॥
तेज कै तत दीपक बालिबा । बाई के करीलै बिचारं ॥ ५ ॥

२—ख. मलेबा; ३—ग. सुधासत; ४—ख. का;

५—यह पद्य ख. प्रति में इस प्रकार है :—
जुरा मृत्यु काल ब्यापै । कामं बस्त सरोरं ॥
लषमण कहै हो बाबा अजैपाल । तुम कौण आरंभ थैं थीरं ॥ ७ ॥

६—ख. जांग; ७—ख. मृति; ८—ख. स्थीरं

९—यह पद्य ग. प्रति में इस प्रकार है :—
द्वादस लहर गगन अस्याने । सो लीषीया जमकालं ॥
षट चक्र जोग धरि बैठा । तब भाजि गया जम जालं ॥९॥

जोति देषि देषि पड़ै पतंगा । नादै लीन कुरंगा रे लो ।
रस को लोभी मैंगल मातो । साध पुरष ते भूंरा रे लो ॥४॥५७॥

समदां की लहऱ्यां पार जु पाईला । मनवा की लहऱ्यां पार न आवै रे लो ॥
आदिनाथ नाती मछिंद्रनाथ पूता । सति सति काणेरी गावे रे लो ॥५॥५८॥

काणोरी पाव जी[1] का पद

राग–गुंड

आछे आछे मही रे मंडल कोई सूरो । म्हरा मनवां नैं समझावै रे लो ॥
देवता नैं दानूं इनि मनवैं व्याप्या । मनवां नैं कोई ल्यावै रे लो ॥टेक॥१॥५९॥

जोति देषि देषि पड़े रे पतंगा । नादैं लीन कुरंगा रे लो ॥
इहि रसि लुबधी मैंगल मातो । स्वादो पुरष ते भँवरा ले लो ॥२॥६०॥

घड़ी एकैं मनवो जती रे सन्यासी । घड़ी एकैं मांगल मातो ॥
घड़ी एकैं मनवो उनंथ गो छिलो । घड़ी एकैं विषिया रातो रे लो ॥३॥६१॥

इंद्री बांध्या जोगी जती रे न होइबा ।
जब लग मनवो न बाधा रे लो ॥ ४ ॥[2]६२॥

समद लहरियां पार पाइए । मनवांनी लहरिया पार पाइये रे लो ॥
आदि नाथ नाती मछिंद्र नाथ पूता । सती कणेरी इम बोल्या रे लो ॥ ५ ॥[3]६३॥

जागो पसुवा जे मति हीणा[4] । ज्यांह न पाया भेव[5] ॥
काल विकालै[6] टाकर मारै । सोवै कणेरी देव[7] ॥ ६ ॥६४॥
द्योसैं चंदा रातैं[8] सूर । गगन मंडल मैं बाजै तूर ॥
सति का सबद कणेरी कहै । परम हंस काहै न रहै ॥ ७ ॥६५॥
कहाँ उगै कहाँ अथवै । कहाँ सूँ रैंणि बिहाई ॥
पूछै काणोरी सुनि हो नागा अरजंद । पिंड छूटै प्रांन कहाँ समाई[9] ॥ ८ ॥६६॥

---

१. क. ख. सती काणोरी ;
२. ये चार पद केवल क. प्रति में हैं।
३. ये चार पंक्तियाँ केवल क प्रति में हैं।
४. ख, हीन; ५. ख, भेवं; ६. ख, उकालां; ७. ख, देवं; ८. ख, दिवस चंदा रात्यूं; ।
९. केवल ग, प्रति में यह पद्य है।

सगौ नहीं संसार । चित्ति[१] नहीं आवै वैरी ॥
निरभै होइ निसंक । हरषि मैं हस्यौ कणेरी ॥ ९ ॥६७॥
हस्यौ कणेरी हरिख[२] मैं । एकलड़ौ[३] आरंन ॥
जुरा विछोही जो मरण[४] । मरण विछोहया मंन ॥ १० ॥६८॥
अकल कणेरी सकलैं बंध । बिन परचै जोग बखाणैं धंध ॥
बिण परचै योगी न होसी रावल । भुस कूट्यां क्यूं निकसै चावल ॥ ११ ॥६९॥
मनवां मेरा बीज बिजोवै । पवना बाड़ि लगाई[५] ॥
चेतन[६] रावल पहरे बैठा । मृगा षेत न पाई[७] ॥ १२ ॥७०॥

सिध गरीब जी की सबदी

काया नग्री में मन रावल । अहनिसि सीझै तहां नृमल चावल ॥
चावल सीझि पकाई डीबि । सति सति भाषंत सिध गरीब ॥ १ ॥८१॥
फाटी कंथा षांडी डीब । आपौ राष्यां फिरैं गरीब ॥
रूष विरष रो कंतरि[८] । इहि[९] विधि रहिवौ[१०] जोग अभ्यास ॥ २ ॥❀७२॥
पाताल की मीडकी अकास जंत्र बजावै । चंद सूरिज मिलै गंग जमन गीत गावै ॥
सकल ब्रह्मंड उलटि अधर नाचै डीब । सति सति भाषंत सिध गरीब ॥३॥७३॥

गोपीचंद जी की सबदी

राज तजेबा रे पूता पाट तजेबा[११] । तजेबा[१२] हस्ती घोड़ा ॥
सति सति भाषंत माता मैंणांवंती[१३] । कलि मैं जीवन थोड़ा ॥१॥७४॥
राजा कै घर राणी होती माता । हमारै होती माई जी ॥
सत षंणै चौबारे बैठंती माता । यह ग्यांन कहां थो लाई ॥२॥[१४] ७५॥

---

१. ग, चिति; ।
२—ग, हरष; ३—ग,ऐकलड़ै; ४—ग, मरद; ५—ग, लड़ावै; ६—ख, चेतनि; ७—ग, पावै ।
❀९—१२ पद केवल ख प्रति में हैं ।
८—ख. विरष रा कांतरि; ९—ख. इन; १०—ख. रहिवा ।
❀ केवल यही एक पद ख. प्रति में मिलता है ।
११-१२—ग. तजिलै; १३—ग. प्रति में 'रे पूता' अधिक पाठ है; १४—ख. प्रति में यह पद इस प्रकार है :—
राजा कै घरि रांणीं होती । हम घरि कहिए मांई ॥
सात षणैं महलिवे रहती माता । ज्ञान क हाथी लाई ॥

गुरू हमारै गोरष बोलियै । चरपट है गुरू भाई ॥
सबद एक हमकौं नाथ जी दीया[1] । तेवो[2] लष्या मैणांवंत माई ॥३॥७६॥

सौला सै राणीं[3] बारा सै कन्या । बंगाल देस बड़ भोगी[4] ॥
बारह[5] बरस हमकूं[6] राज करण दे माता । पीछैं हूँगा[7] जोगी ॥४॥७७॥

आजि आजि करंता पूता काल्हि काल्हि करंता । काया करै कलाल की माठी जी ॥
सति भाषंत माता मैणावंती रे पूता । यौ तन जलि बलि होइ मसांण की माटी जी ॥५॥७८॥

साताषणैं मन्दिर बैसता । पौढ़ता सेज नु लाई ॥
सोवणमें देही तुम्हारे पिता को होती । सो जलि बलि कोइला थाई ॥६॥७८॥

जोग न होसी रे पूता भोग न होसी । नसी कसी[8] जलबिंबर[9] की काया ॥
सति सति भाषंत माता मैंणांवंती रे पूता[10] । भरंमि न भूलौ रे माया[11] ॥७॥८०॥

मरौगे मरि जाहुगे रे । फिरि होउगे मसांण की छारं जी ॥
कबहुक परं तत चीन्हैले रे पूता । ज्यूं उतरौ संसार भौ पारं जो ॥८॥[12]८१॥

कूंण[13] हमकूं भात षुलावै । कौण पषालै पाई ॥
कहाँ[14] सूं मेरै मैड़ी मंदिर । कहाँ तूँ मैंणांवंती माई ॥[15]६॥८२॥

१–ग. में यह पंक्ति इस प्रकार है :—
ऐक सबद हमकूं गुरू गोरषनाथ दीया ।
२–ग. सोवो; ३– में 'मैं' अधिक; ४–ग. में 'भोगी जो ;
५–ग. वारा; ६–ग. मोतैं; ७–ग. होऊँगा ।
❀ यह पद 'ख' प्रति में इस प्रकार है :—
आजि कालि करता रें पूता । काया करै कलाल की माठी ॥
सति सति भाषंत माता मैणांवंती । यउ तन जलि बलि होइगा माटी ॥
८–ग. किसी; ९–ख बांब; १०–'ख' में 'रे पूता' नहीं है;
११–ग. में भ्रमि भूलौ रे माया जी' है;
१२–यह पद ख. प्रति में इस प्रकार है :—
मरउगे मरि जाउगे । मसाण होउगे छारं ॥
कछू राक परंतत चीन्हि हो पुत्र । ज्यूँ उतरो संसार भव पारं ॥
१३—ख. में कौण; १४—ख. में 'सु';
१५—ग में 'जी' अधिक;

सगौ नहीं संसार । चित्ति[1] नहीं आवै वैरी ॥
निरभै होइ निसंक । हरषि मैं हस्यौ कणेरी ॥ ९ ॥६७॥
हस्यौ कणेरी हरिष[2] मैं । एकलड़ौ[3] आरंन ॥
जुरा विछोही जो मरण[4] । मरण विछोहया मंन ॥ १० ॥६८॥
अकल कणेरी सकलैं बंध । बिन परचै जोग बखाणैं धंध ॥
बिण परचै योगी न होसी रावल । भुस कूट्यां क्यूं निकसै चावल ॥ ११ ॥६९॥
मनवां मेरा बीज बिजोवै । पवना बाड़ि लगाई[5] ॥
चेतन[6] रावल पहरे बैठा । मृगा षेत न पाई[7] ॥ १२ ॥७०॥

सिध गरीब जी की सबदी

काया नग्री में मन रावल । अहनिसि सीझैं तहां नृमल चावल ॥
चावल सीझि पकाई डीबि । सति सति भाषंत सिध गरीब ॥ १ ॥७१॥
फाटी कंथा षांडी डीब । आपौ राष्यां फिरैं गरीब ॥
रूष विरष रो कंतरि[8] । इहि[9] बिधि रहिवौ[10] जोग अभ्यास ॥ २ ॥⊛७२॥
पाताल की मीडकी अकास जंत्र बजावै । चंद सूरिज मिलै गंग जमन गीत गावै ॥
सकल ब्रह्मंड उलटि अधर नाचै डीब । सति सति भाषंत सिध गरीब ॥३॥७३॥

गोपीचंद जी की सबदी

राज तजेबा रे पूता पाट तजेबा[11] । तजेबा[12] हस्ती घोड़ा ॥
सति सति भाषंत माता मैंणांवंती[13] । कलि मैं जीवन थोड़ा ॥१॥७४॥
राजा कै घर राणी होती माता । हमारै होती माई जी ॥
सत षंणै चौबारे बैठंती माता । यह ग्यांन कहां थी लाई ॥२॥[14] ७५॥

---

१. ग, चिति; ।
२—ग, हरष; ३—ग,ऐकलड़ै; ४—ग, मरद; ५—ग, लड़ावै; ६—ख, चेतनि; ७—ग, पावै ।
⊛९—१२ पद केवल ख प्रति में हैं ।
८—ख. विरष रा कांतरि; ९—ख. इन; १०—ख. रहिबा ।
⊛ केवल यही एक पद ख. प्रति में मिलता है ।
११-१२—ग. तजिलै; १३—ग. प्रति में 'रे पूता' अधिक पाठ है; १४—ख. प्रति में यह पद इस प्रकार है :—
राजा कै घरि रांणीं होती । हम घरि कहिए मांई ॥
सात षणैं महलिवे रहती माता । ज्ञान क हाथी लाई ॥

गुरू हमारै गोरष बोलियै । चरपट है गुरू भाई ॥
सबद एक हमकौं नाथ जी दीया[1] । तेवो[2] लष्षा मैणांवंत माई ॥३॥७६॥

सौला सै राणीं[3] बारा सै कन्या । बंगाल देस बड़ भोगी[4] ॥
बारह[5] बरस हमकूं[6] राज करण दे माता । पीछैं हूँगा[7] जोगी ॥४॥७७॥

आजि आजि करंता पूता काल्हि काल्हि करंता । काया करै कलाल की माठी जी ॥
सति भाषंत माता मैणावंती रे पूता । यौ तन जलि बति होइ मसांण की
माटी जी ॥५॥७८॥

सातापणें मन्दिर बैसता । पोढ़ता सेज नु लाई ॥
सोवणमें देही तुम्हारे पिता की होती । सो जलि बलि कोइला थाई ॥६॥७८॥

जोग न होसी रे पूता भोग न होसी । नसी कसी[8] जलबिंब[9] की काया ॥
सति सति भाषंत माता मैंणांवंती रे पूता[10] । भरंमि न भूलौ रे
माया[11] ॥७॥८०॥

मरौगे मरि जाहुगे रे । फिरि होउगे मसांण की छारं जी ॥
कबहुक परं तत चीन्हैले रे पूता । ज्यूं उतरौ संसार भौ पारं जो ॥८॥[12]८१॥

कूंण[13] हमकूं भात षुलावै । कौण पषालै पाई ॥
कहाँ[14] सूं मेरै मैड़ी मंदिर । कहाँ तूँ मैंणांवंती माई ॥[15]९॥८२॥

१–ग. में यह पंक्ति इस प्रकार है :—
ऐक सबद हमकूं गुरू गोरषनाथ दीया ।
२–ग. सोवो; ३– में 'मैं' अधिक; ४–ग. में 'भोगी जो ;
५–ग. बारा; ६–ग. मोतैं; ७–ग. होऊँगा ।
ॐ यह पद 'ख' प्रति में इस प्रकार है :—
आजि कालि करता रें पूता । काया करै कलाल की माठी ॥
सति सति भाषंत माता मैणांवंती । यउ तन जलि बलि होइगा माटी ॥
८–ग. किसी; ९–ख बांब; १०–'ख' में 'रे पूता' नहीं है;
११–ग. में भ्रमि भूलौ रे माया जी' है;
१२–यह पद ख. प्रति में इस प्रकार है :—
मरउगे मरि जाउगे । मसाण होउगे छारं ॥
कछू राक परंतत चीन्हि हो पुत्र । ज्यूँ उतरो संसार भव पारं ॥
१३—ख. में कौण; १४—ख. में 'सु';
१५—ग में 'जी' अधिक;

धरती[1] तुमकूं[2] मात षुलावै । गंग पषाले पाई ॥
रूष विरष[3] तेरै मांड़ी[4] मंदिर । धरि धरि मैंणवंती माई ॥१०॥८३॥

माता कै उपदेस करि । तजिला देस बंगालं[5] ॥
गोपीचंद गुरू कै सरणैं । भेटत मगा कालं[6] ॥११॥८४॥

छाढ़्या राज पाट परिछाड़्या[7] । छाड़्या,[8]मोग बिलासं[9] जी ।
गोपीचंद घोला धर[10] सबहीं । छाढ़ि गह्या बनबासं[11] जी ॥१२॥८५॥

राणीं सकल कंन्यां सुत[12] सबहीं । हाहाकार भईला ॥
रावत रैति तुरी गज गल बल । राजा गोपीचंद कहाँ गईला ॥१३॥८६॥

जलंध्री पाव हाथि दे डोबी । गोपीचंद षंदाया जी[13] ॥
मंदिर महल पौलि जहाँ[14] भीतरि । तहाँ अलेख जगाया जी[15] ॥१४॥८७॥

भाइ बहन करि भिष्या मांगो । पूरया सींगों नादं जी ॥
सांभलि साद मिलि सब रांणीं । आइ किया संबादं जी[16] ॥१५॥८८॥

राजा राणी संबाद

रांणी बोलै बाढुड़ौ । राजा गोपीचंद ॥
जोग छाड़ि किन भोगवो । राज सहिद आनन्द ॥१॥८९॥
भोग न भावै भामिनी । लागत रोग समान ॥
जोग तजत हीं होत है । उभैं लोक अपमान ॥२॥९०॥
मरदन तेल फुलेल सौं । मंजन तातै नीर ॥
अब तुम्ह कल कैसें परै । लावहु भसम सरीर ॥३॥९१॥
तेल फुलेल सनेह अति । अलष पुरिस स्यूं नित्त ॥
तत हरि तत बिचारतां । आत्म मन पवित्त ॥४॥९२॥
मन रुचि भोजन भुगतते । मेवा पांन कपूर ॥
अब रूषैं सूषै करत हौ । नाथ पिटरका पूरि ॥५॥९३॥

१—ग. अलख २—ख. मुझकौं;
३—ग. विरखे ४—ख. मैंड़ी ५—६. में 'जी' पाठ अधिक है;
७—थ. परिछाड़ा; ८—ख. छाड़ा; ९—ख. बिसं १०—ख. घौलागिरि;
११—ग. में 'जी' अधिक । १२—ग. में 'सुत' नहीं है; १३—ख. में 'गोपीचंद' पठाया ।
१४ ग- जहाँ; १५-ख. में 'जी' नहीं; १६-ख. में 'जी' नहीं है ।

भावरि भोजन जोग की । अैसो भोग न और ॥
इजा रछ्या प्रांण की । बिंजन बासी कौर ॥६॥९४॥
सीतल जल तुम्ह अंचवते । उजल अमल अबेभ ॥
अब कह्यूं जौ नीर मिलि । उसन कि मलिन असोभ ॥७॥९५॥
गह निसि भूलै आत्मां । अमी सरोवर मांहि ॥
तीरथ गंगा आदि जल । तिन तनि तृषा बुझाहि ॥८॥९६॥
रतन जटित पर सेज परि । करते सदा बिलास ॥
दंपति संपति छाड़ि अब । घर परि रहै उदास ॥९॥९७॥
सेज सबद गुरदेव के । ब्यौरन बिबधि बिलास ॥
बनिता बुधि स्वासा बिभै । संचत सुषद आस ॥१०॥९८॥
मन मैं मढ़ी बनाइ करि । इहाँ रहौ तुम राज ॥
नित प्रति हम सेवा करैं । छाड़ि सकल कुल लाज ॥११॥९९॥
मुकति मढ़ी मैं हम रहैं । सेवग सुर नर और ॥
जोगी जन रमते भले । रवैं न एकै ठौर ॥१२॥१००॥
सतगुर शबद हमारा सिर परि । वाद बिबाद न कीजै ॥
हम जोगी परदेसी माई । भिछ्या होइ त दीजै ॥१३॥१०१॥
काम बिसरि अरु क्रोध तजीला । मोह छाड़ि निरदंद ॥
माया ममिता बिना गुर सरनैं । निरभै गोपीचंद ॥१४॥१०२॥
एकंत का बासा अलख उपासा । तेषंत परम उजासा ॥
गोपीचंद गहन मन जपिबा । सोहं साधंत स्वासा ॥१५॥१०३॥
इड़ा आराधिये प्यंगुला प्रमोधिये । सुषमनां सोधि उभै थीरं ॥
सहश्र दल साधिए अलख अराधिए । रुधिर पलटि फिरि षीर नीरं ॥१६॥१०४॥
पवन कूं प्रेरिबा पछिम दिसि फेरिबा । अपांन प्रांण कौं उलटि मेलै ॥
नाद गगनैं बहै ब्यंद अस्थिर रहै । जोग करि जनम नहीं गमै हेलै ॥१७॥१०५॥
पवन थिरं तां मन थिर । मन थिरं तां ब्यंद ॥
ब्यंद थिरंतां कंध थिर । यौं भाषंत गोपीचंद ॥१८॥*१०६॥
मन राजा मन प्रजा । मन सयल[1] का बंध[2] ॥

---

*यह पद ग. प्रति में इस प्रकार है :—
मन थिरं ता पवन थिर । पवन थिरंता बिंद ॥
बिंद थिरंता जिंद थिर । यूँ भाषै गोपीचंद ॥

१–ग. सकल; २–ग. में 'जी' अधिक ।

मन कूं चीन्हि[1] पारग्रांमीं भये[2] । राजा[3] गोपीचंद[4] ॥ १९ ॥ १०७ ॥
ग्रहिबा कूं नांही देषिवा कैं लछि । चंद सूर बिबरजित पछि ॥
जल मैं ब्यंब दरपन छाया । अच्यंत पद गोपीचंद गाया ॥ २० + ॥ १०८ ॥
पाया लो भल पाया लो । सरब थांन सहेती थिति ॥
रूप सहेती दीसण लागा । पिंड भइ प्रतिति ॥ २१ ॥ १०९ ॥
मन चलंता पवन चलै । पवन चलंता ब्यंद ॥
ब्यंद चलंता कंध पड़ै । यूँ भाषै गोपीचंद ॥ २२ ॥ ११० ॥&

गोपीचन्द जी का पद संवाद

राग रांमग्री[5]

बाहुड़ी ने बाहुड़ी गोपीचंद राजा । बहुड़ि धौलाघर आवोजी ॥
यंछ्या नैं भोजन मन चिंत्या हो राजा । भाव भगति सूं पावोजी ॥ टेक ॥१११॥
पालिक निद्रा नावै रे रांणी । माह्मै मनि राज न आवै जी ॥
जोग जुगति नीं राज हम्हारे । अविचल कैसूं थावै जी ॥ १ ॥ ११२ ॥
अगर चंदन नीं मढ़ी बधाऊं । सोना नां तुम्ह नैं तुंब जी ॥
कहो तो रूपानां पत्र घड़ाऊ । सोनां नां सींगी नादं जी ॥ २ ॥ ११३ ॥
गगन मंडल मैं मढ़ी हमारी चंद सूर ना तूंबं जी ॥
सहज सील नां पत्र हमारे । अनहद सींगो नादं जी ॥ ३ ॥ ११४ ॥
कूर कपूर तुम्हें जिमता हो राजा । भगरड़ी मास्ये जी ॥
ऊपरि पानं नां बीड़ा आरोगता । वेली ना पानं किम षास्ये......जी ॥ ४ ॥

१—ग. चोन्हे; २—ग. भया; ३—ख. जारा; ४—ग. में 'जी' अधिक ।
+ यह पद ग में इस प्रकार है :—
ग्रहिवे कूं नाहीं देषिवे कूँ लषि । चंद सूर बिब रजित पषि ।
जल मैं बिब द्रपन मैं छाया । अैसा अंचित पद गोपीचंद गाया ।

&ख प्रति में 'गोपीचंद की सबदी' में कुल ३५ पद हैं । 'ग' में केवल १९ ही हैं । इस पृष्ठ के दो पद 'ख' प्रति में नहीं हैं । 'ख' के शेष १७ पद 'ग' में भी मिलते हैं । ख और ग प्रतियों में पदों का क्रमान्तर है, तथा अंतिम दो पद केवल 'ग' प्रति में ।

५. केवल 'क' प्रति में

कूर कपूर माहै सास उसासं । भुरकट अंम्रित प्यालं जी ॥
ग्यानं ध्यानं नां पानं हमारे । सबुधि षमियाँ पालं जी ॥ ५ ॥ ११६ ॥
सौड़ि तुलाई तुम्हें पीढ़ता हो राजा । साथ रड़ै किम स्वैस्यौ जी ॥
गोद सिरहाणैं नैं सब दिसि सेवग । षपरड़ैं किम षास्यौ जी ॥ ६ ॥११७॥
साथर स्वैस्यां नै खपरि खाइस्यां । इंट उसीसै देस्यां जी सौड़ि तुलाई मा सतगुर वाणी । भूंमी सेज्या करिस्यां जी ॥ ७ ॥११८॥
कौंण तुम्हारा राजा चरन पषालिस्ये । कौंण कहै तत बातैं जी ॥
कौंण तुम्हारी सेज या थरिस्ये । कौंण पुर विस्ये भातं जी ॥ ८ ॥११९॥
गंगा हमारा राणीं चरण पषालिस्यै । मनसा करै तत बातं जी ॥
कंथा हमारी सेज पाथरिस्ये । अलष पुरविस्ये भातं जी ॥ ९ ॥१२०॥
सोला सै राणीं नै बार सै कन्यां । तिन्हौं निसासड़ौ पड़ि ज्यौ जी ॥
जिणि मा राजा नौ राज छुड़ायौ । ते तौ जोगी मरि ज्यो जी ॥ १० ॥१२१॥
जलंध्री प्रसादैं जती गोपीचंद बोल्या । गुरनैं गालि न दीज्यौ जी ॥
सतगुर म्हारा मस्तक ऊपरि । और भले रड़ा कीजै जी ॥ ११ ॥१२२॥

× × ×

कहै राजा गोपीचंद सुनौं री बाई । सतकी भिष्या देस्यौ मैंणावती माई ॥टेक॥
बाट घाट की थेगली । मेरे पाट पटोला ॥
मसांण की ठीकरी थाल कचोला ॥ १ ॥
टूटी फाटी कंथा मैं फिरूं उदासा ॥१२३॥
लूषा सूका टूक रुषे बिरषे बासा । २ ॥
धरणि पालैंग्यड़ा साथरि सेजं । परवति मठली भोगि सुरेजं ॥ ३ ॥१२४॥
तजीला बंगाल देस मैंणावंती माई । जलंध्री प्रसादैं गोपीचंदि चौपदी गाई ॥४॥१२५॥

घोड़ा चौली जी की सबदी

श्री गोरखनाथ पंथ का भेव । अनंत सिधां मिलि पायौ भेव ॥
पाया भेव भई प्रतीत । अनंत सिधां मैं गोरख अतीत ॥ १ ॥१२६॥
रावल ते जे चालै रांही । उलटी लहर समंद्र समांही ॥
पंच तत का जानै भेव । ते तौ रावल प्रत्तषि देव ॥ २ ॥१२७॥
पांगल तेजे प्रकीरति गालै । अहनिस ब्रह्म अगनि प्रजालै ॥
प्रजालै अगनि लगावै बंध । काया अजराँवर कै कंध ॥ ३ ॥१२८॥

बनखंडी तेजे बन षंड मैं रहै । सुनि निरालंब बारता कहै ॥
घड़ी न मनसा आसा पास । ते बन षंड मैं रहै उदास ॥ ४ ॥१२६॥

अगमागम कै रैते गम । अहनिस काया राषै दम ॥
नाद बिंद का जाणैं भेव । अगमांगम करै ते देव ॥ ५ ॥१३०॥

आई पंथि मैं जे अनभै करै । उलटा बांण गगन कूं धरैं ॥
उलट वजाई वेध्या भूंरा । सिध बाल गुसाई[1] साध्या जूंरा ॥ ६ ॥१३१॥

पंषि सुंनि निरालंब देषै अंष । प्रंम सुंनि मैं जोति असंष ॥
वेध्या हीरा मांणिक पाया । तौ तव पंक पंथ मैं आया ॥ ७ ॥१३२॥

धूज ते धजा कूं जांणैं । उलटा पवन गगन कूँ तांणैं ।
अहनिस नाद बजावै बीनां । तेई धूज सूं लीनां ॥ ८ ॥१३३॥

गोपाल ते जे बंचै काल । अहनिस अनभै जीत्या ब्याल ॥
काम क्रोध मेटै बिह्म की माया । ते गोपाल नाथ की काया ॥ ९ ॥१३४॥

बोलंत सिध घोड़ा चोली । हमें षत्री षेत्र का सूरा ॥
गगन मंडल मैं रहनि हमारी । बाजै अनहद तूरा ॥ १० ॥१३५॥

हणवंत[2] पैसि रामायण कीता । दससिर छेदि बहौड़ी सीतां ॥
सारा सेत तहां बंध्या पांणी । दस सिर छेदि लच्छि घर आंणी ॥ ११ ॥१३६॥

गोरख ते जे राषै गोई । माया मनसा करै न मोही ॥
सदा अकलपत रहै उदासा । परचै जोगी सिंभ निवासा ॥ १२ ॥१३७॥

जोग आरंभ मए सिधा । द्वादस हंसा ग्यानहि बिधा ॥
सोहं सोहं सास उसासं । बोलै घोड़ा चोली मछिंद्र का दासं ॥ १३ ॥१३८॥

अचित पुराणं गगन गरास । बोलै चोली मछिंद्र का दास ॥
अचित फुरै हाथयौ न आवै । तब घोड़ा चोली कहां तूं षावै ॥ १४ ॥१३९॥

नष सष पूरि रही जे पवनां । आयौ है दूध भात षाइगो कवनां ॥
षुध्या की अगनि मिटाई काल । चौष्टि संधि पवन की भाल ॥ १५ ॥१४०॥

मेर डड का गागरि बंध । बाई षेलै चौष्टि संध ॥
अमरा मरै कालु कै डंस । न पड़ै काया न उड़ै हंस ॥ १५ ॥१४१॥

---

१. ग—गुदाई ।

२. ग—हिणवंत ।

श्री चरपटनाथ जी की सबदी

किसका बेटा किसको बहू । आप सवारथ मिलिया सहू ।।
जेता फूला तेता काल । चरपट कहै ए संऊआल जंजाल ।।१।।१४२।।
काया तरवर माकड़ चित्त[1] । डालैं पानैं[2] भरमै नित्त नित्त ।।
कलपै कलपै दह दिसि जाइ । तिस कारण कोई सिध नथाइ ।।२।।१४३।।
ढोल कछोटी मन भंग फिरै । घरि घरि नैंन पसारा करै ।।
षाया जरै न वाचा फुरै[3] । ता कारणि भुँहु करि करि[4] मरै ।.३।।१४४।।
अवधू राती कंथारैं पटरोल । पगे पावड़ी मुषि तंबोल ।।
षाजै पीजै कीजै भोग । चरपट कहैं बिगोवैं जोग[5] ।।४।।१४५।।
एक सेत पटा एक नील पटा । एक टसर कंटोला[6] लांब जटा ।।
पंथ छाड़ि मन उबट बटा । चरपट कहै ये पेट नटा ।।५।।१४६।।
टीका टामां टम कली । बोलें मधुरी वांणी ।।
कहैं चरपट सुणि हो नागा अरजन । ए सौरां की सहनांणी ।।६।।१४७।।
बाकर कूकर किंगर[7] हाथ । बाली भोली तरणीं साथ ।।
दिन कर भिष्या रात्यूं भोग । चरपट कहैं बिगोवैं जोग ।।७।।१४८।।
नाथ कहांवै सकें न नाथि । चेला पंच चलावैं साथि ।।
मागैं भिष्या भरि भरि षांहि[8] । नाथ कहावैं मरि मरि जांहि ।।८।।१४९।।
कानैं मुद्रा गलि रुद्राष । फिरि फिरि मांगैं निपजो[9] साष ।।
चरपट कहै सुणौं रे लोइ । बरतणि दै पणि जोग न होइ ।।९।।१५०।।
रंगा चंगा बहु[10] दोदारी । जैसी षोती भुहर मुलमाधारी ।।
चरपट कहै सुणौं रे लोई । ये पाषंड है पणि जोग न होई[11] ।।१०।।१५१।।

१—यह पद ग में नहीं है; २—ग पातैं; ३— फरै; ४—क कुरि कुरि; ५—पाठान्तर ग प्रति ।
राती कंथा रा पटरोल । पग पावड़ो मुषा तंब्रोलै ।।
षाजै पीजै कीजै भोग । चरपट कहै बिगाड्या जोग ।।
६—ग कै टीका ।
७—ग. कँगुरा किंगर; ८—ग. षाइ, ९—क. निपनी; १०—ग. बहो; ११—पाठान्तर ग प्रति :—
बरतण छै पणिजोग न होई ।

पहरि मूँषंड़ी कंकन हाथि। नकटी बूची जोगणि साथि ॥
ऊठत बैठत काकण कार। तजि न सक्या माया जंजार[१] ॥११॥१५२॥

जटा बिटंबन आंगै छार। मोटी कंथा बहु[२] बिस्तार ॥
बिचित्र[३] बांनी अंगा चंगा। बँटवा[४] सीवें बहु बिध रंगा ॥ १२ ॥१५३॥

मान अभिमानैं लादैं फिरैं। गुरू न षोजैं मूरिष मरैं ॥
डंड कमंडल भगवां भेस। पाथर पूजा बहु उपदेस ॥ १३ ॥१५४॥

जीव हतैं अरु पूजा करैं। जंत्र मंत्र ले हिरदैं[५] धरैं ॥
तीरथ जाइ करैं अस्नान। बोलै चरपट पंडित ग्यांन[६] ॥ १४ ॥१५५॥

न्हावैं धोवैं पषालैं अंग। भीतरि मैला बाहरि चंग ॥
होम जाप इग्यारो करैं। पारब्रह्म के सुध न धरैं ॥ १५ ॥१५६॥

दिन दिन हत्या करैं अपार। सूत गया तिग ले लैं मार ॥
ब्रह्मा रूप ठग्या संसार। चरपट कहै यहु धूत बिचार ॥ १६ ॥१५७॥

गंध[७] विगंधा[८] मूता[९] षांड। पड़ि पड़ि तसवा[१०] तोडैं हाड ॥
बंच न सक्या[११] आंगुल च्यारि। चरपट कहै ते माथै मारि ॥ १७ ॥१५८॥

जल की भीति पवन का थंभा। देवल देषि[१२] भया अचंभा ॥
बाहरि भीतरि गंध बिगंधा। काहै भूलै पसुआ[१३] अंधा ॥ १८ ॥१५॥

चरपट कहै सुणो रे अवधू। कांमणि संग न कीजै ॥
जिंद ब्रिद नौ नाड़ी सोषै। दिन दिन काया छीजै ॥१९॥१६०॥

आंशि की टगटगी-नाक की डंडी। अहार की कोथली[१४] नरक की कुंडी ॥

१—क. जाल, ख. जार; २—ग. बही;

३-४—ख. प्रति में इस प्रकार है:—

विचित्र कंथा अचला चंगा।
बटवांसी वैं बहु रंगा ॥

५—क. ले मन में धरैं; ६—ख. जांन।

७—ख. बजा; ८—ग. गंग;

९—ख. विधा; १०—ग. पसुवा पड़ि पड़ि;

११—ग. ज्यांह न बंची; १२—ग. देव्वर;

१३—ग. पसवा; १४—ख. में "तहां" अधिक;

मन का बासा तहाँ[1] मास का लूचा । सिष्टि का छार तहाँ केस का कूचा[2]।
।।२०।।१६१।।

गंध विगंध जहाँ चार बिचारी । चरपट चाल्यौ मात जुहारी ।।२१।।१६२।।
जतन करंता जाइ सुजानु[3] । भग देखि न घालै घानु[4]।।
कोटि करस लूँ बाढ़ै[5] तुम्हारी आव । सत सत भाषंत श्री चरपट राव ।।
२२।।१६३।।

साधु कहत्वैं भुगते भग । ताका काला मुष पीला पग ।।
कूटै चमड़ी धरै धियान । ता पसुवा मैं कहा गियान ।।२३।।१६४।।
फोकट फाकट कथै गियान । कूटें चमड़ी धरे धियान ।।
सिध पुरिस स्यूँ करै उपाधि[6] । चरपट कहैं ये कलिजुग का बाद[7] ।।२४।।१६५।।
बामैं हाथि कमंडल । दाहिणैं हाथ डंडा ।।
मांडौं चक्र पूजौ कै भंडा । वै वौ उभे मुंह आगैं रंडा ।।
चरपट कहै ये सबै पाषंडा ।। २५ ।।+१६६ ।।
मंदै मासे लावै चीत । ग्यान विवरजित गावै गीत ।।
अहनिसि भोग बिलासं[8] । चरपट बोलै कंध विणासं ।। २६ ।। १६७ ।।
दया धरम सत चित न बसै । अतीत देषि निंद्या मनि हसै ।।
कथै गियान अरु फोकट रहण । चरपट कहै कलू का चिहन ।। २७ ।। १६८ ।।
जिसका मति सही कू छाजै । और करै तौ डींगा बाजै ।।
चरपट कहै यहु आचिर्ज देष । कनक कामिनी षाया भेष ।। २८ ।। १६९ ।।
फोकट आवै फोकट जाइ । फोकट बोलै फोकट थाइ ।।
फोकट बैठा करै बिबाद ।।
चरपट कहै ये सबै उपाध ।। २७ ।। १७० ।।
पगे चमाऊं माथै टोप । गल में बागा मन में कोप ।
माया देषि पसारा करै । चरपट कहै अणषूटी मरै ।। ३० ।। १७१ ।।
जौ तूं रावल परा सियांना । कसि किनि[9] बाँधै टाटीं ।।
बारह आंगुल पैसि गई है । सोलह आंगल फाटी ।। ३१ ।। १७२ ।।

१—ख. जहां २—ग. मेंपाठान्तर:—
आंषि की टगटगी नाक की डांडी । चाम की चंद्रीपा रूथू सू मांडी ।।
मल प्रसेद सुगति जहां सूदा । अहार की कोथली नरक का कूंडा ।।
३—ग. सुजाइ; ४—ग. घाव; ५—ख. बधै; ६—ग. उपाधो; ७—ग. वादी ।
+चिन्ह अंकित अर्थात् २५ वां पद क प्रति में नहीं है;
८—ख. बिलालं । ९—क. हसि किनि,

झोली मोली पाई पत्र पाया । पाया पंथ का भेव ॥
रीता जाऊं भर्या आऊं । कहा करै[1] गुरु देव ॥ ३२ ॥ १७३ ॥
हंसना योगी रिंगनी सांटि । पुरिष कुलषणैं बसा नाटि ॥
कवि लजालू नीलज नारि । चरपट कहै ते माथै मारि ॥ ३३ ॥ १७४ ॥
बजर कछौंटी[2] चाबैं पान । तीरथि जाइ उगाहैं दान[3] ॥
करै बैदगी ज्यावै रोगी । चरपट कहै ते[4] बिगूता जोगी ॥ ३४ ॥ १७५ ॥
आइं न छोड़ौं लैंन न जाऊँ । ताथीं[5] मेरा चरपट नांऊं[6] ॥
आई भी छोड़िये लैंन[7] न जाइये ।
कुहै गोरष पूता बिचारि बिचारि षाईये ॥ ३५ ॥ १७६ ॥
टूका[8] षाया मगर मचाया । जैसा सहर का कूता ॥
जोग जुगति की षबरि न जांणी । कान फड़ाई बिगता ॥ ३६ ॥ १७७ ॥
जोग न जोग्या[9] भोग न भोग्या, अहिला गया जमारं ॥
ग्रामि गदहा रामै सूकर । फिरि फिरि फिरि ले अवतारं ॥ ३७ ॥ १७८ ॥
रूप बिरष गिर कंदलि बास । यह निसि[10] रहिबा जोग अभ्यास ॥
पलटै काया पंडै[11] रोग । चरपट कहै धनि धनि[12] जोग ॥ ३८ ॥१७९॥
अवधू मूल दुबारै बंद[13] लगाइ । पवन पलटै गगन[14] समाइ ॥
नादा बिंद दोउ असथिर होइ । अदृष्टि पुरिष द्दिष्टि तब जोइ ॥ ३९ ॥१८०॥
पवनी कंथा अनलै बास । पिसण न कोई आवै पास ॥
मन सूं मतै[15] न ग्यांन सूं गूझ[16] । चरपट कहै धनि अवधूत ॥ ४० ॥१८१॥
निरभै निसंक तत बेता । मन मानि बिवर्जित इन्द्री जिता ॥
ग्यांन[17] सेल फटक मन रता । चरपट कहै ये सिध मता ॥ ४१ ॥१८२॥
करतलि भिष्या बिरष तलि बास । दोइ जन अंग न मेलै पास ॥
बन षंडि रहे मसाणैं भूत[18] । चरपट कहै ते अवधूत ॥ ४२ ॥१८३॥
चिरकट चीर चंक्र[19] मन कंथा । चित चमाऊं करणां ॥
ऐसी करणी करौ रे अवधू । ज्यूं बहुरि न होइ मरणां ॥ ४३ ॥१८४॥

१–क. इब कहा करैं । २–ख. बज्र कछोटी ३–क. दाम; ४–क. में 'ते' नहीं है । ५–ख. लीण न जान; ६–ख. तिस कारणि; ७–ख. लीन न जाइये; ८–ख. टका; ९–ख. भोग्या । १०–क. इहि विधि; ११. क, छंटै; १२. क, धनि धनि ते; १३. ग, बंध; १४. क, गंध; १५. ख, मतौने; १६. ख, गलै; १७. ख-ग, में 'ग्यांन' नहीं है; १८. क, में 'रहे' है । १९. क, द्रिढ़; ।

अवघू मूल दुबारै लावै बंध । बाई षैलै चौसठि संध ॥
जुरा पलटै षंडै रोग । बोलै चरपट धनि धनि जोग ॥ ४४ ॥१८५॥
मारौ भूषरु साधौ निंद । सुपिनै जाता राषौ बिंद ॥
जुरा पलटै षंडै रोग । चरपट कहै धनि यहु जोग ॥ ४५ ॥१८६॥

बंधसि बंध विषम करि बंध । तलि करि रवि ऊपरि करे चंदा ॥
रैणि दिवस रस चरपट पीया । षूटै तेल न बूझै दीया ॥ ४६ ॥१८७॥
थिर करि मनवां द्रिढ़[1] कर चित । काया पवन पषालै नित ॥
अमरा मरी ज्यूं थिरवै कंध[2] । न उड़ै हंसा न पड़ै जिंद ॥ ४७ ॥१८८॥
कथनी वदनी वलि करि जाव । बंधि सकहु तौ बंधौ बाव ॥
चरपट कहै पवन की डोर । भूंकत गदहा ले गयौ चोर ॥ ४८ ॥१८९॥
मुंजली कंथा वगड़ी बास । कामिनि अंग न लावै पास ॥
द्रिढ़ करि राषौ पांचौ इन्द्र । चरपट बोले ते जोग्यन्द्र ॥ ४९ ॥१९०॥
मन नहीं मूंडैं मूंडैं केस । केसां मूंड्या क्या उपदेस ॥
मूडैं नहीं मन मरदक मान[3] । [4]चरपट बोलै तत गियान ॥ ५० ॥१९१॥
मन चंचल पवन चंचल[5] । चंचल बांई की धारा ॥
इहि घट मध्ये तीन्यूं चंचल । क्यूं राषसि[6] झरता व्यंद का द्वारा ॥ ५१॥१९२॥
भरथर चरपट गोपीचंद । बिंदौ आतमा परमांनंद ॥
छांड़ौ षीर पांड बहु भोग । राषौ आतमा साधौ जोग[7] ॥५२॥१९३॥
नां घरि त्रिया ना पर त्रिया रता । ना घरि धंन न जोबन मता ॥
ना घरि पुत्र न धीय कंवारो । तातैं चरपट नींद पियारी ॥५३[8]॥१९४॥
एका गूंडा[9] ऊपरि पाव । दूजा गूंडा ऊपरि भाव ॥
तीजा आगै बाजै तूरा । चरपट कहै बिगोवा पूरा ॥५४॥१९५॥
पूजि पूजि भाठा सब जग घाठा । निज तत रह्या[10] निरालं ॥
जोति सरूपी संग ही आछै । ताका[11] करौ बिचारं ॥५५॥१९६॥

---

१. क, थिर; २. क, कंद । ३. क, कांम न; ४. क, बोलै चरपट;
५. क, में 'मन चंचल पवन; ६. क, रषिसे;
७. क. में यह पंक्ति ऐसी है:—
जोग न जोग्या भोग न भोग;
८. यह पूरा हद क. में नहीं है;
९. ख. से गूंठा; १०. ख. रह गया ११. क. तिसका ।

तांबा तूंबा ये दोइ सूचा । राजा ही तैं जोगी ऊंचा ॥
तांबा डूबै तूंबा तिरै । जीवै जोगी राजा मरै ॥५६॥१९७॥
दरसन पहिर कहावैं नाथ । मुषि बोलैं चतुराई ॥
आलै बांसै ज्यूं घुण लागा । डाल मूल षणि षाई ॥५७[1]॥१९८॥
नाड़े डोडे षाडे घरम । ऊँचा मंदिर कूंड़ा करम ॥
चरपट कहै सुणौं रे लोक । रतन पदारथ गँवाया फोक ॥५८॥१९९॥
चांम की कोथली चाम का सूवा । तास की प्रीति करि जगत सब मूवा ॥
देव गंध्रप मुनि मानवां जेता । उबर्‌या एक को गुरमुषि चेता ॥५९॥२००॥

चरपटनाथ जी के श्लोक

इक पीत पटा इक लम्ब जटा । इक सूत जनेऊ तिलक ठटा ।
इक जंगम कहीए भसम छटा । जउलउ नहीं चीनै उलटि घटा ।
तव चरपट सगले स्वाँग नटा ॥२०१॥

मूसेकंनी बहु फल दूढंब दूढब जाय । पानी सोषै कलीका चरपट बैठा खाय ॥२०२॥
पंज सिरसाही गंधक लेहु । पारा सिरसाही तिन्न लेहु ॥
इक तोला गोरोचन पावै । चार दूध तिहं मांहि खपावै ॥
दूध दूध का क्या क्या नांऊ । चरपट इह विधि कहै सुभाऊ ॥२०३॥
जब सेर अढाई दूध खपाइ । तब हीया में तत्त समाय ॥
बकरी उठनी गाय अरु भेड़ । सतिगुर सहज बताई खेड ॥
चार दूघ गंधक महि सुखाई । तांके गुण क्या कहो सुनाई ॥
सूखे करके शीशी पाय । बालू यंत्र सों तेल चुआय ॥
रत्ती तोला तांबा मैं देंइ । तत्तकाल कंचन करि लेइ ॥
झोला होइ सु पेटहिं खाय । चरपट कहे रोग तब जाय ॥२०४॥
पारा इक सिरसाही लेहु । सम हरताल सु तांमहि देहु ॥
सुयन मकरखी सिरसाही मीत । सम सिंगरफ ले गुर परतीत ॥
सरसाही सुहागा सो देइ धमाल । अम्बर बेल सो खरलहिं डाल ॥
खरल करै जब वासर तीनि । गर परसादी होय महीन ॥२०५॥

———

१—यह पूरा पद 'क' में नहीं है ।

९—चौरंगी नाथ

प्राण सांकली

अथ चौरंगी नाथ जी की प्राण सांकली लिष्यते ।

सत्य वदंत चौरंगी नाथ । आदि अंतरि सुनौ व्रितांत ।
साल वाहन घरे हमारा जनम उतपति, सति मां झुट बोलीला ॥१॥२०६॥

ई अम्हारा भइला सासत; पाप कल्पना नहीं हमारे मने, हाथ पांव कटाय रलाइ लायला निरंजन वने, सोष संताप मने परभेव सनमुष देषिला श्री मछंद्रनाथ गुरुदेव, नमसकार करीला, नमाइला माथा ॥२॥२०७॥

आसीरबाद पाईला अम्हे, मने भइला हरषित, होठ कंठ तालूका रे सुकाईला, घर्म ना रूप मछंद्रनाथ स्वामी ॥३॥२०८॥

मन जांनै पुन्य पाप, बचन न आवै मुषै, बोलब्या कैसा, हाथ रे दीला फल मुषे पीलीला, ऐसा गुसाई बोलीला ॥४॥२०९॥

जीवन उपदैस भाषिला, फल आम्हे विसारला, दोष बुध्या त्रिषा बिसारिला ॥५॥२१०॥

नहीं मानै सोक घर घरम सुमिरला, अम्हे भइला सचेत, के तुम्हारे बोले पुछीला ॥६॥२११॥

अम्हे आदि अंत सुष दुष बोलीला, जबे दया उपजीला, गुसाई मनैं तबे थिर हो चौरंगी तुम्हें आनमना न होइबा ॥७॥२१२॥

अम्हारा बचन तुम्हें दिढ़ करि धरिबा, काम क्रोध दुष मने न थोइबा, ये भव नदी तुम्हे सहजे तिरबा, सुष दुष पडेरा प्रापति ॥८॥२१३॥

सहजै उतपति प्रलै सहजै निनारत निमील चितैंनि सुलैभवै (?) थिर हौ चौरंगी तुम्हें, परम ध्याने जोग जुगति, सति जति क्रिया प्रमाण, सत गुरु वचने हित उपदेश त्रियौ (तिर्यो) म्रित घोर पारं, गुसांई बचने भईला दिढ़ बुध ॥९॥२१४॥

भरमत जीया मन रहैला समोद, आसण बंध भेद मुद्रा जोग जुगत रा बुझा-ईला भेव; पिंडे प्राणे परचो करलै, अम्हारा गुरु सिध मछिंद्र नाथ देव ॥ १० ॥ २१५॥

अहार प्रीति पालन चीति, श्री गोरखनाथ कुस मुषला बारै बरष अम्हारै निमिति आणि जोगला ॥ ११ ॥ २१६ ॥

ग्यांन रा गुर अम्हारा सिध मछींद्र नाथ, ता प्रसादै भइला पग हाथ; त्रिभवने किरत थाकली अम्हारी अनदाता श्री गोरषनाथ ॥ १२ ॥ २१७ ॥

बारै बरष अम्है एक चित मने, तिरीयै म्रित घोरपारं, दुतर तिरलो अम्हे, सिघ भईला काया ।। १३ ।। २१८ ।।

गोरषनाथ पुछीला अम्हे ते जीवन उपाया तहा कौंन कथिला अम्हें परम गुसांई ।। १४ ।। २१९ ।।

तिह देषै पंछे सिष्यन भईला, अनंत सिघा आया, पर तिरला त्रिभवने कोरत अम्हारी अम्हे आपा नु धारीला ।। १५ ।। २२० ।।

मछंदनाथ गुरु अम्हारा, गोरषनाथ भाई, विवरी विचारी चौरंगी आनमना न हो री ।। १६ ।। २२१ ।।

कहा कौं कथिबा कछु कथना न जाई, सिघ संकेत वाणी बिरला हिरदै समाई; पिंडे प्राणे परचो संधान, गुरुमुष आये ले ज प्रमान ।। १७ ।। २२२ ।।

जे जन बुझिबै सो जन बुझै, तिसि पिंडरा होइ मोष्य मुक्ति; आपणा रे दूष जाणबो पर दूष ।। १८ ।। २२३ ।।

सति सति भाषंत चौरंगीनाथ प्राण सांकली कथी विचारि अनंत सिघा उतरीया पार । भव नदी प्यंड ब्रह्मांड करि जाँनी सिघ संकेत अचंचल वाणी । अकथ कथा ते कही न जाई, सति सति वदंत चौरंगीनाथ, बिरला हिरदै समाई ।।१९।।२२४।।

बाहरि भीतर फीटला भ्रांति, ते पिंडे प्राणे होय मुक्त । प्राण सांकली सरीर विचारं, अनंत सिधां तिरीयौ मृत घोर पारं ।। २० ।। २२५ ।।

सत्य गुर मछंद्रनाथ प्रसादे अम्हारा फीटला भ्रांति । सत्य सत्य भाषंत चौरंगीनाथ अनंत पिंडेरा होइ मुक्ति ।। २१ ।। २२६ ।।

एवं सरीरे आदिमेर, अष्ट कुल नाग, अष्ट पाताल, दतुर्दश भवन ।। २२ ।। २२७ ।।

सपत दीप, सपत सागर, सपत सलिता, सपत पाताल, सप्त सुर्ग, पंच भूत ।। २३ ।। २२८ ।।

पचीस प्रकृति, पंच षेत्र, बिहानवैं सहस नदी, चौरासी लाष जीव जोनि, च्यार षानीं, च्यार बांनी, चत्रुदस सास्त्र ।। २४ ।। २२९ ।।

सात बार, पंद्रै तिथि, सत्ताईस नष्यत्र, नवग्रह ।। २५ ।। २३० ।।

बारह रासि, सर्व देव देवता, चतुर्जुग संख्या, इति सर्व संजोग्य उतपनी काया ।। २६ ।। २३१ ।।

बाहरि भीतर एक सतगुरु कथंता, सपुत्र श्रोता । कायारा बिचार, चौरासी षंड ग्यांन ।। २७ ।। २३२ ।।

सवा लाष उपदेस, बाणवै लक्ख को राति दिन, सिव सकति, अष्ट कुल परबत ।। २८ ।। २३३ ।।

सुर्ग मृत्य पाताल कूर्म तीन भवन व्यापक, अनेक नांव रूप काया मध्ये ॥ २९ ॥ २३४ ॥

गुर उपदेसै जालि (जि ?) बा तलयगा कौ (जलि पाताल या कौ ?) तल पाताल बोलीयै । तल पाताल ऊपर नील तल बसै ॥ ३० ॥ २३५ ॥

नील तल ऊपर षणुगांउ गांउ बसै, तहाक सुतल बोलीयै षणुगांउ गांठ ऊपर नली हाड़ बसै ॥ ३१ ॥ २३६ ॥

तहां कौं परतल बोलीयै, नली हाड़ ऊपरि चष्प कुंडली बसै, चष्प कुंडली ऊपरि गंभीर नाल बसै ॥ ३२ ॥ २३७ ॥

तहां कौ तलीतल बोलीयै, गंभीर नाल ऊपर समकूहड़ बसै तहां कों रसातल बोलीयै, समकूहड़ ऊपरि केसी सूत्र अस्थान बसै ॥ ३३ ॥ २३८ ॥

तहां कौ पाताल बोलीयै । एवं सरीरे सपत पाताल बोलीयै, सपत पाताल ऊपरि पृथ्वी बसै, नाग कुर्म कुकंरो देवदत धनंजया ॥ ३४ ॥ २३९ ॥

ता मध्ये पंच प्राण, प्राण अपान समान उदांन व्यांन, ता मध्ये प्रांण कारण ॥ ४० ॥ २४० ॥

प्राण आछै लई सबै आछैं, प्राण गैलो सबै जाय; इह कौ अनेक गुरु उपदेसैं जानियै ॥ ४६ॐ ॥२४१॥

पोटी ऊपर अंतरमाला बसै, तहां कौ अनंतमाया बोलीयै, ता ऊपर हिरदै कंवल बसै, हिरदै कंवल ऊपर हिरदै लिंग बसै, हिरदै लिंग ऊपर हंस बसैं ॥ ४७ ॥ ॥२४२॥

बसै, बतीस हाड़ ऊपर जमघाटी बसै, जमघाटी ऊपरि चत्रकंठ बसै ॥ ४८ ॥ ॥२४३॥

चत्रकंठ ऊपरि नीलकंठ बसै, चत्रनील कंठ मध्ये अर्क चितली देअबा तत्र नाद धुनि अस्थान बसै नाद धुनि अस्थान ऊपरि देवदत्त वायु बसै ॥ ४९ ॥२४४॥

देवदत्त बायु ऊपरि जिभ्यामूल बसै, जिभ्यामूल कौ आदि अस्थान बोलीयै, इहकौ अर्धशक्ति बोलीयै ॥ ५० ॥२४५॥

जिभ्या दिषणो पासै षइंकाल बसै, जिभ्या बामै पासै काल बसै, मध्य जिभ्या सति बसै, जिभ्या अग्रै स्वाद अस्थान बसै ॥ ५१ ॥२४६॥

तल दंतपटी कौं सिवचक्र बोलीयै, दोयपटी चांपिला वज्रावली बोलीयै, जिभ्या तलै गंगा जमना बसै ॥ ५२ ॥२४७॥

ॐ मूल प्रति में ३४ के पश्चात् ४० और तत्पश्चात् ४६ क्रमांक दिया हुआ है, जिससे ज्ञात होता है कि बीच के कुछ पद्य छूट गए हैं ।

तत्र जलयांनै अमृतावली बोलीयै, तहां कौं सीतल बोलीयै, जिभ्या ऊपर लंबका बसै, लंबका ऊपर घंटका बसै ।। ५३ ।।२४८।।

घंटका ऊपर तालुका बसै, तालका ऊपर गगन गंगा बसै, तहाँ होइ नाक बाट कान बाट चष्षबाट, इह कौं त्रिबेनी बोलीयै ।। ५४ ।।२४६।।

कर्न कौं अनहद पंथ बोलीयै, चष्ष कौ गगनदीप बोलीयै, नासिका कौं जमल संष बोलीयै ।। ५५ ।।२५०।।

नासिका का पवन सुललना बहै तो उजीणी बोलीयै, तहाँ कौं सुसंच सुष आरोग्य बोलीयै, सुललना बहै तो आन उजीणी बोलीयै, तहां कौ विसंचि विग्रै बोलीयै ।। ५६ ।।२५१।।

दाहनै वाहै तौ भुंजिबा, बामै बहै तो सोइबा, सक्ति मन बहै तो बैसिबा, आतमा चितवनि छाडि आन कौं न मन धरबा ।। ५७ ।।२५२।।

इतना प्रकार का कलेवर संज्योग बोलीयै । एती साधक उलटि जिभ्या अभ्यास करण बावां पट चाँपिला दहिण पुट बहै ।। ५८ ।।२५३।।

दाहिणा पुट चांपिलां वामा पुट बहै, मध्या चांपिला आवागमण रहै, इह कौं काष्टी समाधि बोलीयै ।। ५६ ।।२५४।।

चंद्र अस्थान बुईला जागै, रबि अस्थान बुईला सोवै, इहकौं समाध्यान बोलीयै । इह जोग अभ्यास बोलीयै ।। ६० ।।२५५।।

इहकौ समाधि सिध हठ जोग बोलीयै, इहकों वज्रवली बोलीयै, अर्ध ऊर्ध मधि निरोधनां कौं सिधावली बोलीयै ।। ६१ ।।२५६।।

चष्ष कौ गिगन जोति बोलीयै, चष्प भीतर सुकुल पटी बसै, सुकुल चष्प भीतर कृष्ण पटी बसै, तहाँ कौं नीलकांति मनि बोलीयै ।। ६२ ।।२५७।।

नीलकांति मणि भीतरि निर्मल जोति बसै, निरमल जोति भीतर निरंजन पुतली बसै, निरंजन पुतली ऊपर निद्रा बसै, निद्रा ऊपर चन्द्र बसै, चन्द्र ऊपर सप्त सून्य ब्रह्मांड बसै, एते एते एक नाम अह्यान कौं पिंड बोलीयै । सर्व मस्तग कौं सुर्ग बोलीयै, पिंडि ब्रह्मांड बसै ।। ६३ ।।२५८।।

षरतर गुर स्यौं उपदेसै जानीयै, पिंड अस्थान अँगुली अंतरै आकास ब्रह्मांड अंगुली अंतरै परम सुन्य ब्रह्मांड बसै ।। ६४ ।।२५६।।

सुन्य ब्रह्मांड अंगुली अंतरै निरंजन ब्रह्मांड बसै, निरंजन ब्रह्मांड अंगुली अंतरै निरंतर ब्रह्मांड बसै, इति सप्त ब्रह्मांड बोलीयै ।। ६५ ।।२६०।।

सप्त ब्रह्मांड ऊपर पर परम सून्य निरालंबन अस्थान बसै, तहांको सिव भवन बोलीयै, तहाँकौ अनूपम बोलीयै ।। ६६ ।।२६१।।

पूर्व भागे उदैगिर बसै, पछि भागे अस्तगिर बसै, बाइब कूणैं हेम गिर बसै, नैरति कूणे कनेर गिर बसे ॥ ६७ ॥२६२॥

ईसान कूणैं महेन्द्र गिर बसै, अग्नि कूंणै पुन्ये गिर बसै, दिष्षन कूणैं बनचाल गिर बसै, उतर कोणैं कबलास गिर बसै ॥ ६८ ॥२६३॥

इति सरीर अष्ट गिर बसै अष्ट गिर मध्ये अलंक छत्र वसै, अलंक छत्र मध्ये गहन गंभीर सरोवर बसै, तिहकौं गहन गंभीर समुद्र बोलीयै ॥६९॥२६४॥

तहाँ कौं गगन गंगा बोलीयै तहाँकौं अमर अस्थान बोलीयै तहाँकौं अमृत कुंड बोलीयै तहाँकौ मान सरोवर बोलीयै ॥७०॥२६५॥

ते गहन गंभीर सरोवर मध्ये सहस्त्र दल कंवल मध्ये परमहंस बसै ते स्वयं बोध क्रीड़ा आनंद आछै ॥७१॥२६६॥

तहां कौं परम ध्यान बोलीयै, तहाँको आतमा चेतन वोलीयै, ए ध्यान चिंतने पापक्षय होय ॥७२॥२६७॥

पाप पुन्य विवर्जित सिध संकेत गुरु उपदेसै जानीयै, एते एक पिंड ब्रह्मांड घान घानंतर बिचारं सिध मछींद्रनाथ कथीलै सारं अनंत नरलोक तिरंति ॥७३॥२६८॥

मृत धारेपारं सत्य सत्य मार्षत चौरंगीनाथ त्रिभवने विस्तार काया अछंव हाथ ऊर्ध सुर्ग भवन बोलीयै अधै पाताल भवन बोलीयै इति तीन भवन बोलीयै ॥७४॥२६९॥

द्वै पगरा द्वै सिर द्वै हाथौरा द्वै सिर में पासेरा द्वै सिर का दोर अर्ध अर्ध मध्ये द्वै सिर ॥७५॥२७०॥

ए अष्ट सिर अष्ट नाग बोलीयै, कादोर (?) तीन भवन बोलीयै, मध्ये घान घानते बिचारं अर्घ नाड़ी जिभ्या बोलीयै, अनंत नाग वोलीयै ॥७६॥२७१॥

अर्धा नाड़ी इन्द्री बासिग नाग बोलीयै, बामैं पगरा सिर कंकोड नाग बोलीयै, दिषन करेरा सिर पवन नाग बोलीयै ॥७७॥२७२॥

बावैं करेरा सिर महा पवंग नाग वोलीयै, मेर पासेरा दष्षन सिर संसनाग बोलीयै । एते सरीरे अष्टनाग बोलीयै ॥७८॥२७३॥

गंगा जमुना सरस्वती नरबदा गोदावरी देवनदी गोमती एते सरीरे सपत सलता बसै ॥७९॥२७४

जिभ्या दष्वण पासैं गंगा बसै, जिभ्या बामै पासै जमुना बसै, मध्य जिभ्या सरस्वती बसै, पवन नाड़ो नरबदा बसै ॥८०॥२७४॥

अनिनाड़ी गोदावरी बसै, मेर मध्ये देवनदी बसै, मूत्र नाड़ी गोमती बसै, इति सरीर मध्ये सप्त सलिता बसै ॥८१॥२७६॥

सरीरे सप्त समुद्र बसै, षीर नीर दधि सुरा मधु सार घ्रित इति सरीरे सप्त समुद्र बसै ॥८२॥२७७॥

मूत्र कौ षार समुद्र बोलीयै, हिरदै कर्ण रस समुद्र बोलीयै, नेत्रैं नीर समुद्र बोलीयै, सलेषमा नासिका कौं दधि समुद्र बोलीयै ॥८३॥२७८॥

बीज मीज को घृत समुद्र बोलीयै, सप्त दीप चष्य मनुष्य नासिका कर्ण हस्त पादुका उद्र इति सरीरे सप्त दीप बोलीयै ॥७४॥२७६॥

सरीरे चतुर दिगपाल बसै, उर्ध भाग कौं पूरब दिग बोलीयै, इष्ट कर्न कौं दष्षन दिगपाल बोलीयै ॥८४॥२८०॥

हेतबुध मत स्नुत के उत्तर दिगपाल बोलीयै, सरीरे चतुर दिगपाल बोलीयै ॥८६॥२८१॥

रात दिन जाग्रत कौं दिन बोलीयै, निद्रा कौं रात्रि बोलीयै, ए सरीरे दिन रात बोलोयै, बिंद कौ चंद्र बोलियै ॥८७॥२८२॥

पवन को सूर्य बोलीयै, ए सरीरे चंद्र सूर्य बोलीयै, इंह कौ सिवसक्ति बोलीयै पंच तीर्थ केदार सागर ॥८८॥२८३॥

गया प्रयाग वाराणसी सिरे केदार बोलीयै, उदरे सागर बोलीयै, कंठे गया बोलीयै ॥८६॥२८४॥

नाभि प्रयाग बोलीयै, सकल व्यापक वाराणसी बोलीयै, ए सरीरे पंच तीर्थ बोलोयै ॥६०॥२८५॥

पंच भूत। पृथ्वी अप् तेज वायु आकास ए पंचभूत काया मध्य बोलीयै ॥६१।२८६।

पंच प्रकृति। कर्ण चक्षु नासिका जिभ्या इन्द्री ए सरीरे पँच प्रकृति बोलियै ॥६२॥२८७॥

च्यार षानी। स्वेतरज अँडरज जारज उदबीरज। सिरें स्वेतरज षांन बोलीयै नेत्रे अंडरज षांन बोलीयै, उदरे जारज षांन बोलोयै, सर्व तुचा कौ उदबीरज षांन बोलीयै ॥६३॥२८८॥

ए सरीरे च्यार षान बोलीयै। चौरासी लष जीव जोन को सरीरे बत्रेकी बोलोयै तीन तीन सै साठ हाड कौ ॥६४॥२८६॥

सवा लाष परबत बोलीयै, बौहतरी सैस नाडी कौं बौहतरि सहस नदी बोलीयैं सर्व संधि कौं सोलै तिथि बोलीयै ॥६५॥२६०॥

सप्त धात कौ सपत बार बोलीयै। नवद्वार कौ नव ग्रह बोलीयै, सर्व सूत्र कौं सत्ताईस नक्षत्र बोलीयै। च्यार भेद नाभि हृदै ॥६६॥२६१॥

कंठ मुष ए च्यार वेद नाभि रघुबेद बोलीयै हृदै जुजरवेद बोलीयै, कंठ साम बेद बोलीयै ॥९७॥२९२॥

मुषे अथर्बण बोलीयै, ए सरीरे चार बेद बोलीयै दया धर्म पराकर्म क्रोध ॥९८॥२९३॥

ए च्यार जुग बोलीयै, दया कौं सतजुग बोलीयै धर्म कौं पराक्रम कौं द्वापर जुग बोलीयै ॥९९॥२९४॥

क्रोध कूं कलजुग बोलीयै एते सरीरे च्यार जुग बोलीयै एवं नाना रूप विधानाम पिंड ब्रह्मांड छे ॥१००॥२९५॥

षट् चक्र अक्रिता काया गोहाचक्र लिंग चक्र नाभि चक्र हृदै चक्र कंठ चक्र भ्रुव चक्र ए षट् चक्र बोलीयै ॥१०१॥२९६॥

गोहा चक्र कूं आधार चक्र बोलीयै, च्यार पांषड़ी रक्त वर्ण कंवल बोलीयै ॥१०२॥२९७॥

आधार सक्ति नांव देवता सूर्य प्रभाति क्रांति तत्र अस्थाने अकोचने बध देवा अग्नि वृधि आयु वृधि सर्व व्याधि निवारणं ॥१०३॥२९८॥

तिहां थीं तीन अंगुल अंतरै लिंग चक्रं स्वाधि अस्थान बोलीयै ॥१०४॥२९९

षट् पांषड़ी कंवल पीत वर्ण कामेश्वर नाम देवता दीर्घ ब्रह्म सूत्र ॥१०५॥३००

ब्रह्म अग्नि रोथित तीन तिहांणा रा थान तत्र ध्यान बंध अकोचने त्रिभवन जयंत ॥१०६॥३०१॥

दिव दृष्टि तहाँ कूंती दस आंगुली आंतरै नाभि चक्र मन पर बोलीयै दस पांषड़ी कमल कपिल वर्ण सेवता नाम देवता ॥१०७॥३०२॥

छत्र बाल आकार सर्व नाड़ो रा मूल अस्थान पवन रोथित तत्र ध्यान बंध अकोचने वज्र काया बोलीयै ॥१०८॥३०३॥

तिहां कूं ती द्वादस आंगुली आंतरै हृदै चक्र अनहत बोलीयै द्वादस पांषड़ी कमल स्वेत वर्ण प्राण लिंग देवता सूर्य कोटि प्रभा अमृत लिंग बोलीयं, सर्व धर्म व्यापार कारक तत्र ध्यान बंध अकोचने सर्ब कर्म निवर्त होइ ॥१०९॥३०४॥

तिहां कुंती अष्ट आंगली आंतरै कंठ चक्र विसुध बोलीयैं, सोलै पांषड़ी कमल धूम्र वर्ण जो निराकार नाद धुनि नाम देवता तत्र ध्यान बंध अकोचने स्वास उसास निवारण होइ, सर्व व्याधि पंडल होइ, आयोर्वृद्धि ॥११०॥३०५॥

तिहां कूंतं सोलै अंगुली अंतरै भूचक बोलीयै, अग्याग्यास बोलीयै, दोइ पांषड़ी कमल रक्त वर्ण रुद्र नाम देवता हेत बुधि चेतना जाग्रत राथान तत्र ध्यान बंध आकोचने मन बायो आस्तंभना विश्वमृत निद्रा निवारणं देह सिधि फल प्रदायकं, इह कूं षेचरी मुद्रा बोलीयै, इहकौं जोगाभ्यास ध्यान बोलीयै ॥१११॥३०६॥

तिहं ऊपर अंगुल एक अंतरै सुम्य ब्रह्मड बोलीयैं, तिहं कू गगन मंडल बोलीयैं, तिस कूं सिध चंद्रमंडल बोलीयै। तिस कूं देव भुवन बोलीयै, एते नाम अस्थान पिंड ब्रह्मंड देव देवता थान थानंत (धान धानंत) मूर्ति सतगुरू मछिंद्र प्रसादे आहारी फीटीला भ्रांति सिध एंकत त्रिभवने गोप्य गुरमुषै छलिछा (वा) आंपुना ही रूप रेष नही तहां प्रवाणवां कैसा ॥११२॥३०७॥

दोष पष ग्रासबा गुर उपदेसा इक कूं पिंड ब्रह्मंड कूं दोइ पष बोलीयै, इह नाम अस्छानक कूं चौरासी पंड ग्यान बोलीयै, इह कौं सवा लाष उपदेस बोलीयै, इह कौं बाणवै लष्ष फांकी बोलीयैं ॥११३॥३०८॥

इतै सबं जाणिवा, गुर उपदेस सै प्रवांणवा, एते एक मध्ये सारं तिनै पिंडरा होइ उधारं, इह की सास्त्र प्रतीत आतमा प्रतीत बोलीयै, इह कूं विमर्णं बोलीयैं, एते एक नाम अस्छान धिनतंर ॥११४॥३०९॥

मन पवन संजोग भईला विस्तार, ए सिधांत काया प्रमाण पिंड ब्रह्मण्ड, इह रचे कर्ण इक बित न जिंह रे सरणै समया ॥११५॥३१०॥

अप्रमाण ले जीवन उपाया, सति वदंत चौरंगीनाथ बिन गुर उपदेसे लष्या न जाई, त्रिभवने अगोचर हरु ब्रह्मा जानि, सिध संकेत अचंभू बांनि ॥११६॥३११॥

अकथ कथाते कथना न जाई, सति बदंत चौरंगो बिरला हिरदै समाइ। अप्रमाण ले जीवन उपाया ॥११७॥३१२॥

एति वदंत चौरंगीनाथ विन गुर उपदेसै लष्या न जाई, त्रिभवने अगोचर हरु ब्रह्मा जानि ॥११८॥३१३॥

अपष्या पष्या नहीं रूप रेष नांहि गुर उपदेसै आयसं प्रतिष्य पिंड ब्रह्मंड लाह रे पुरणा ॥११९॥३१४॥

तीन भवन भरिपूर आप आकार बिहूना श्री गुर मंछिद्रनाथ बचने अम्हारी फीटली भ्रांति ॥१२०॥३१५॥

स्वयं प्रतीत चौरंगीनाथ अनंत पिंडेरा होइ मुक्ति, अमूल तै मूल उतपना निराकार तैं उतपना आकार ॥१२१॥३१६॥

अरूप तै रूप उतपना, शून्य को हो भाई सिष्टि का बिस्तार, अमनि तै मनि उतपना, अबाइ उतपना बाइ ॥१२२॥३१७॥

सुन्य थैं थूल उतपना, अध तैं घाट न होइ सर्व संज्योगै उतपनी काया, सर्व विज्योगै बिनासीयै ॥१२३॥३१८॥

इह विमण सिध संकेत दुर्लभं, गुर उपदेसै कथतै दुर्लभं, प्रतिपालतै दुर्लभं, मन पवन विषम हलोल ॥१२४॥२१९॥

टलमल विंद निद्रा अघोर, एते कारणै जापता व्याकुलता स्वयं प्रतीति न पाया प्रमान, श्री गुरु मछिंद्र परसनें चौरंगी अमनतें मन त्रिभवनें थीरं ॥१२४॥३२०॥

एकांत कर लै राति दिनं, आसण बंध भेद मुद्रा जोग जुगति गुर बचन प्रति-पालला, प्यिंडरा मइला भोष्य मुक्ति ॥१२६॥३२१॥

जे जन बूझिवै सो जन बूझै दुतरतिरौ मृत माया गुर उपदेसे दिढ़ चित मनै सीलंत एक थूल काया ।।१२७॥३२२॥

श्री गुर बचने सिधि थाने आपना स्वयं प्रतीत करतव्या दोइ समतुल्या ॥१२८॥३२३॥

तिणै पिंडेरा मोष्य मुक्ति त्रिभवने बिसतार, अकुंठ काया बिसेस रघु गुर उपदेसै जानीयै ॥१२९॥३२४॥

दिढ़ चित मने कलेस न भावा प्रीति पालबा, सिध संकेत बानी अमन तैं मन अबह तै बहाई, आसन बंध्या तै ॥१३०॥३२५॥

एते एक संजोगे तीन भवन एकांति साधना सपत पाताल सपत पाताल ऊपर सपत दीप सपत दीप ऊपर सपत सुनकार ॥१३१॥३२६॥

सपत सुनकार ऊपर बसत निरालंब निरंजन निराकार ग्यांने मन पवन हेत बुध मति ॥१३२॥३२७॥

ए अपार श्री गुर मछिंद्रनाथ प्रसादे इह कौ सिध संकेत बोलीयै, इह कौ गुर उपदेश बोलीयै, इह की परम पर अपार अनुपम बोलीयै ॥१३३॥३२८॥

इह कौं ध्याईयै कंद्रप जित्रा चाप त्रिबंध दाय जै सकति संकोच जै गांठि फुटै ब्रह्म अग्नि प्रजालै ॥१३४॥३२९॥

ब्रह्म मंडल फोड़ीयै, त्रिवेणी संगम पवन संचारीये. षट्चक्र को फुटीयै ॥१३५॥३३०॥

सुमेर मध्ये बाट गगन भेदीयै, भंवर गुफा प्रवेसीयै, इहां को पिंड प्राण परस्वौ बोलीयै इह कौं परम सिध बोलीयै, ॥१३६॥३३१॥

इह कौं अगम बोलीयै, इह कौं परम परमार बोलीयै, इह अहोनिस ध्यानैं चेतने च्यार तुटै न करता विंद ॥१३७॥३३२॥

परकंतो पवन कलपता मन अघोरता निद्रा इह कौं स्वयं प्रतीत बोलीयै, इह कौ पिंड प्राण परचौ साधन बोलीयै, इह कौ मृत्य जयंत सिघ पंथ बोलीयैं ॥१३८॥३३॥

ए च्यार तुटै सो कायं अजरं अमरं निर विघन निष्पपत ॥१३९॥३३४॥

त्रिभवने पूजा ते ऊपर कोउ नाहीं दूजा अयं सो परम पद सो परम आसण ॥१४०॥३३५॥

देवन सुर नर पाए प्रमाण वेद सास्त्र अगोचर ब्रह्मा न जानी त्रिभवने दुर्लभ ॥१४१॥३३६॥

गुरु उपदेसै जानीयै आप आपै प्रमानीयै ॥१४२॥३३७॥

ए च्यार साध्या साधना स्वयंप्रतीते आप आप देषबा प्रमाणी ॥१४३॥३३८॥

दिने दिने तेज बल ब्रिधना बुधिमंत चेतन देह बिकार सर्वं व्याधि षंडन वायु अस्थंभना पाप पुन्य ललित षंडना ॥१४४॥३३९॥

दिष्टिस्त्रुसुर्तिगता वर्धना विभ्रम भाँति माया छेदना बुधि सुबुधि आयो बर्धना ए च्यार विल्यायं ॥१४५॥३४०॥

एते एव स्वयं प्रतीत आपे आप देषबा प्रमाणं श्री गुरु मछंद्रनाथ प्रसादे सिध चौरंगीनाथ ज्योति ज्योति समाइ ॥ १४६ ॥ ३४१ ॥

इति श्री चौरंगीनाथ जी की प्राणसांकली सपूरण। इति श्री योगशास्त्र पोह वदि शनि वा० ॥

ॐ नमो आदेश गुरु कूं अकल सकल कै तेज बायो समेरु में एक वृक्ष लगावे यो जामोत यात सामो काल वृक्ष बटी पांच डालि एक डालि उत्तर कूं गई दूजी डालि पूरब कूं गई तीजी डालि दक्षिण कूं गई चौथी डालि पश्चिम कूं गई पाँचमी डालि इकवीसमैं ब्रह्मंड गई एक मुषी रुद्राष एक मुषो रुद्राष कहा बोली ब्रह्मा को कमल दोय मुषी रुद्राष कहा बोली ब्रह्मा के नेत्र त्रिमुषी रुद्राष कहा बोली ब्रह्मा विष्णु महादेव चोमुषी रुद्राष कहा बोली च्यार वेद पांचमुखी रुद्राष कहा बोली पांच पांडव छ मुषी रुद्राष कहा बोलो षट दरसण सात० सात दीप आठ अष्ठांग नव० नवनाथ दस० दस द्वार इग्यार० इग्यार लिंग द्वादश वारमी हणमंत जती त्रिपुरा दैष चलै संग्राम आओ पार्वती कहां रुद्राष कै ग्यान हाथै बांधे तो हाथणा उर पुर कौ राज मस्तक बांधे तो इंद्र की पदवी कंठैं बांधै तौ कृष्णापुर कौ राज रुद्राष जांणि बांधे तो एकोत्तर सो गाउ प्रमात एकोत्तर सौ लिंग अंगीकार रुद्राष मंत्र धाणि बांधै तौ एकोत्तसो गौ हते प्रमाते ॥ मंत्र रुद्राष रो १०८ वेला जाप कीजै ॥ इति ॥ ३४२ ॥

चौरंगी नाथजी की सबदी

मूल सींचौ रे अवधू मूल सींचौ। ज्यूं तरवर मेल्हंत मालं[1]।
अभै चौरंगी मूल सीचिया। यौं[2] अनभैं उतर्‌या पारं ॥ १ ॥३४३॥

१–ग. डालं; २–ग. में नहीं;

मारिबा तौ मन मस्त मारिबा । लूटिबा तौ[1] पवन भमारं[2] ।
साधिबा तौ थिरतत्त साधिबा । सेइबा[3] निरंजन[4] निराकारं ॥ २ ॥३४४॥
अंगनि सेति अंगनि जालिबा । पानी[5] सेती सोषिबा पानी[6] ।
बाई सेती बाइ फेरिबा । तब आकास मुषि बोलिबा बांणीं[7] ॥ ३ ॥३४५॥
माली लो भल माली लो । सीचै सहज कियारी ।
उनमनी कला एक पुहुप निपाया[8] आवागमन निवारी ॥ ४ ॥३४६॥

श्रीनाथाष्टक *

(सिद्ध चौरंगीनाथ वर्णित)

ॐ गुरुजी–श्रीगोरक्षनाथ योगेन्द्र युगपति निगम अगम यश गावतें ।
श्री शंकर शेष विरंचि शारद नारद बीन बजावते ।
श्री गोरक्ष चर्णों प्रणाम्यहं ।
जय श्री नाथजी के चर्णों प्रणाम्यहं ।
जति गोरक्ष के चर्णों प्रणाम्यहं ॥ टेर ॥
ॐ गुरुजी–बालरूप जतिन्द्र जटाधर ध्यावते षटमुख जति ।
श्री रामचंद्र वशिष्ट हनुमत धुरु प्रहलाद रति पति ।
श्री गो० । जय श्री० । जति गो० ॥ १ ॥

ॐ गुरुजो शेली नाद सुकंठ साजत अन्हद शब्द प्रकाशितम् ।
अजर अमर अडोल आसन सुर नर मुनी मन रंजितम् ।
श्री गो० । जय श्री० । जति गो० ॥ २ ॥

१–ग. में नहीं; २–ग. भंडार; ३–ग. सेयबा;
४–ग. तौ निरंजन; ५–ख. पाण; ६–ख. रंगो;
७–ग. में नहीं है; ८–ख. पहुप निपाइलै ।

* कादिमठाधीश आचार्य, श्री राजा चमेलीनाथ जी महाराज की कृपा से प्राप्त ।

ॐ गुरुजी—अंग भस्मी असंग निर्मल ऊनमन ध्यान सदा रता।
चन्द्र भानु समानु लोचन कांन कुण्डल सोभिता।
श्री गो०। जय श्री०। जति गो०॥ ३॥

ॐ गुरुजी—अष्ट सिद्ध नवनाथ भैरव बीर चौसठ जोगनी।
इन्द्र वरुण कुबेर सेविते मदन मोहन रुक्मनी।
श्री गो०। जय श्री०। जति गो०॥ ४॥

ॐ गुरुजी—ऊत्तर देश विचित्र गिरवर सर सरिता अगनित बहे।
सादक सिद्ध सुजान तज मद मान निरगुण ब्रह्म लहे।
श्री गो०। जय श्री०। जति गो०॥ ५॥

ॐ गुरुजी—सलपुर नगर सुशंख रावल जांके सुत शिमरन कियो।
यम फांस त्राश निवारो सब दुःख सुन्दर तन असिथर दियो।
श्री गो०। जय श्री०। जति गो०॥ ६॥

ॐ गुरुजी—श्री प्रसुधर तप कठिन किनों सागर तट मठ बांधियो।
धुन्धूकार निवारणे हित श्री मन्जुनाथजी प्रघट भयो।
श्री गो०। जय श्री०। जति गो०॥ ७॥

ॐ गुरुजी—श्री पति नाथ सनाय अष्टक पढत बिघन नसावेहि।
भ्रणत पीर चौरंगी सोई नर मन वांछित फल पावेहि।
श्री गोरक्ष्य चर्णों प्रणाम्यहं। जय श्री नाथजी के चर्णों प्रणाम्यहं।
जति गोरक्ष के चर्णों प्रणाम्यहं॥ ८॥३४७॥

इति गोरष बालं मम पालं जीतो जम कालं मंगला आर्तिया अष्टक
पुरो शिवम् सिद्धो आदेश आदेश अटल क्षेत्र योग शास्त्र नमाम्यहम्॥

———

१०—चुणकर नाथ (चौणकनाथ*) जी की सबदी

काकड़ी करंम करंता[1] अवधू। बाई चलै असरालं।
सूनैं देवलि चोर पईसै[2]। चेतौ रे चेतन[3] हारं॥ १॥३४८॥

---

* ग प्रति में चौणकनाथ के नाम से यही सबदियाँ हैं।
१—ग. न कीजै रे;　२—ग. पैड़ैगा;　३—ख. तनहारं;

सांधि सूधि के गुर मरै[१]। बाई स्यूं बिंद[२] गगन स्यूं फेरै।
मन का बाकल चुणियां[३] षोलै। साधी[४] ऊपरि मन क्यूं[५] डोलै ॥ २ ॥३४९॥
बाई बंध्या सकल[६] जगे[७]। बाई किन ही न बंध।
बाई बिहूणां ढहि[८] पड़ै। जौरै कोई न षंध ॥ ३ ॥३५०॥
नीचैं षोज्या नीड़ा[९] पांणी। ऊंचै का तिस मूवा।
सबद बिचारै ते बड़ कहिए। दिन का[१०] बड़ा न हूवा ॥ ४ ॥३५१॥

११—जलंध्री पाव जी की सबदी

सुंनि मंडल मैं मन का बासा। तहां[११] परम[१२] जोति प्रकासा।
आपैं[१३] पूछै आपैं कहै। सतगुरु मिलै तौ[१४] परम[१५] पद लहै ॥१॥३५२॥
एक अचंभा ऐसा हुआ। गागरि मांहि उसारबा कूवा।
वोछी लेज पहूंचै नांहीं, लोक पयासा मरि मरि जाहीं ॥२॥३५३॥
आसा पास दूरि करि। पसरंती नि (र) वारि।
सिध साधिक स्यूं संग करि। सति गुरु[१६] ग्यान बिचारि ॥३॥३५४॥
धरती आकास[१७] पवन पाणीं। चंद सूर षट दरसंण जांणीं।
ऊंकार का जांणैं मंत। अैसा[१८] सिघ अलष अनंत ॥४॥३४५॥
गोपीचंद कहै स्वामी वस्ती[१९] रहयूं तौं कंद्रप ब्यापै। जंगलि रहयूं[२०] षुधा संतापैं॥
आसणि रहयूं तौ व्यापै[२१] माया। पंथि चलूं तो छीजै काया।
मीठा षाऊं तौ ब्यापै[२२] रोग। कहौ किसी[२३] परि साधूं[२४] जोग ॥ ५ ॥३५६॥
अवधू संजमि अहारं। कंद्रप नहीं व्यापै।
बाई आरंभ षुधा न संतापै। सिध आसण नहीं लागै माया।

१—ग. सिंध साधक मेरै; २—ख. बांद; ३—ग. चुणि चुणि; ४—ग. सीठी; ५—ख. क्यूं मन; ६—ख. सइल; ७—ख. जुग; ८—ख. टहि; ९—ग. नैंड़ा; १०—ग. करि।

११—ग. जहां; १२—ग. प्रम; १३—ग. आपे; १४—ग. तै; १५—ग. प्रम; १६—ग. गुरुमुष; १७—ख. आस; १८—'ग' में 'अर' अधिक पाठ; १९—ख. बती; २०—जाऊं; २१—ख. लागै; २२—ख. बाढ़ै; २३—ग. कासी; २४—ग. प्रसाधू।

नाद पयाणैं न छीजै काया ।
जह्वा स्वाद न कीजै भोग । मन पवन ले साधौ जोग ॥ ६ । ३५७॥❀
थोड़ा षाइ तो कलपै कलपै । धरणं षाइ तो रोगी ।
दहूं पषा की संधि बिचारै । ते को बिरला जोगी ॥ ७ ॥३५८॥+
मरदने केस सथामि लै अवधू । पवनां थामि लै काया ।
अन्तसे जुरा मरन थांमि लै । बिचार त्याग लै माया ॥ ८ ॥३५९॥
एक राज छाड़ि करि जोगी हुए । एक जोगी छाड़ि घर वासं ।
छूटा हस्ती बन कौं जावैं । स्वान करंग कै पासं ।
सत सिध मते पार । न मरै जोगी न ले अवतार ।
सुंनि समावै बावै बीना । अलष पुरष तहां ल्यौ लीना ।
यहु संसार कुबक का खेत । जब लग जीवै तब लग चेत ॥
आष्यां देषैं कानां सुणैं । जैसा बोवै तैसा लुणैं ॥
जोग न जोग्या भाग न भोग्या । अहला गया च मारा ।
ग्रामे गधा जंगलि सूकर । (फिरि) फिरि ले अवतारा ॥ १०॥ ×३६१॥
इहु संसौ पाईऐ षेलै । अब बोईए ते आगैं फलै ।
इहु संसार करम की वारी । जब लग सरधा सक्ति संसारी ॥ ११ ॥३६२॥
पहलै कीया सो अब भुगतावै । जो अब करै सो आगैं पावै ।
जैसा दीजै तैसा लीजै । ताठैं तन धर नींका कीजै ॥ १२ ॥३६३॥
अजपा जपना तप बिन तपना । धुनि गहै धरिबा ध्यांनं ।
जोग संहारं पाप प्रहार । अैसा अद्भूत ग्यानं ॥ १३ ॥३६४॥

———

❀ ग प्रति में इस पद के स्थान पर ८ पंक्तियों का एक पद इस प्रकार है :—
सांभलि अवधू तत बिचारं । लै निज सकल सिरोमणि सारं ॥
संजम अहार कंद्रप नहीं व्यापै । बाई अहार षुधा न संतापै ॥
सिध आसन नहीं लागै माया । नाद पयानैं नहीं छीजै काया ॥
जिभ्या स्वाद न कीजै भोग । मन पवनां ले साधो जोग ॥
+यह पद केवल ग. प्रति में है ।
× ९ वां और १० वां पद (पूर्ण संख्या ३६०, ३६१) केवल ग. प्रति में हैं ।

१२--दत्त जी (दत्तात्रेय) की सबदी[1]

जान थी अजान होइबा । तत लेइबा छांनि ।
गुरू कीये लाभ है अवधू । चेला कीयां हानि ॥१॥३६५॥
बड़ैं कह्यां बड़ा ना होइबा । लहुड़ा न ऊतरिबा पारं ।
आडाडंबर जोग न होइबा । गरवा तत बिचारं ॥२॥३६६॥

बहुतानि बहु चिंतानि । दुतिया पासि बंधनं ।
एकाएकी महा सुषी । ज्यूं कँवारो हाथि कंकनं ॥३॥३६७॥
मढ़ी न बंधिबा सती न प्रभोधिबा । भिष्षा न षाइबा स्थूलं ।
पंच घर चेताइवा एकांति रहिबा । ए जीवन का मूलं ॥४॥३६८॥

कोटि मधे कोई एक भूझै । कोटि मधे कोई एक सूझै ।
कोटि मधे कोई एक सूरा । कोटि मधे कोई एक पूरा ॥५॥३६९॥
सूर्यां का पंथ हार्यां का विश्राम । सुरता लेऊ बिचारो ।
अणपरचै प्यंड भिष्षा मांगै । अंतकाल होइगी भारी ॥६॥३७०॥

सुर मंदिर तर मूल निवास । भिष्षा भोजन रहनि उदास ।
सकल प्रग्रिह भोग तियाग । तौ क्यूं न सुष करंत बैराग ॥७॥३७१॥
रथा करपट निध्रन कंथा । भेद अभेद बिबरजित पंथा ।
स्वाद बिबाद बिबरजित तुंड । तौ सुष मैं जीवै मुंडित मुंड ॥८॥३७२॥

मारि न षाणां मुरदार न कहणां । अहनिसि रहेबा ध्यानं ।
फुरै त रोजी नहीं त रोजा । असा ब्रह्म गियानं ॥९॥३७३॥
लोका मधे लोकाचार । सतगुर मधे एकंकार ।
जे तूं जोगी त्रिभुवन मार । तऊ न छाड़ै लोकाचार ॥१०॥३७४॥

जे तू छाड़िस लोकाचार । तौं तूं पायेसि मोष दुवार ।
उनमोंन मंडप तहां निरबाण देव । सदा सजीवं निभावन भेव ।
लौलीन पूजा तहां दीव न धूप । सति सति भाषंत दत अवधूत ॥११॥३७५॥

संत क्रिया हमारे जनेउ बोलिये । जत हमारैं धोती ।
गुरु हमारै अलेष पुरिष वोलिये । हिरदा पुस्तक पोथी ॥१२॥३७६॥
दत जू लागा तत स्यूं । तत्त दत्त ही मांहि ।
तत्त दत्त परचा हुवा । तब दूजा कहणां नांहि ॥१३॥३७७॥

१--केवल ख. प्रति प्रति में ।

अग्नि मधे अगिनि होइबा ॥ जल मधे होइबा नीरं ।
बाइ रुप त्रिभुवन षेलिबा । सिध संकोच राषिबा सरीरं ॥१४॥३७८॥
अबधू संजमि रहै तो क्या करै रोगं । संतोष आया तौ क्या करैंगे भोगं ॥
आत्मा जाणंत तौ क्या कथै ग्यानं । प्रमात्मा षोजंत तौ क्या धरै ध्यानं
॥१५॥३७९॥

आकार मुकता स्यंभू चलता सारं । संसार रहिता ।
अगम बहिता खोजी । षोजंत बयारं ॥१६॥३८०॥
दत्त दी देही तत की । तत की राजा तत ही बिलसैं षाई ।
यक डग जाइ न दतजी । ततमें रह्या समाई ॥१७॥३८१॥

दत्तात्रे (दत्तात्रेय) जी की सबदी*

षिमा जापं सील सेवा । पंच इंद्री हुतासनं ।
उनमनि मंडप निरवान देव । सदा जीवत भावना भेव ।
लौलीन पूजा मन पहूप । सति सति भाषत श्री दत्त देव अवधूत ॥१॥३८१॥

अस्थूल मंदिर मन धजा । साँच तुलसी सोल मंजरी ।
दया पहौप संतोष कलस । गिनांन घंटा सुरती आरती ।
आत्मदेव अनूप पूजा । अषंडमूरत्ति उत्मो सदा ॥२॥३८३॥

करम भरम हम ध्याइ करते । नह क्रम सत गुर लषाया ।
करम भरम का संसा त्यागा । सबद अगोचर पाया ।
उनमन रहना भेद न कहनां । पीवनां नोझर पांनी ।
पानी का सा रंग ले रहनो । यूं बोबंत देवदत्त बांनी ॥३॥३८४॥

पृथी बाइ अनल आकास । आपो अगनि चंद्रमा ।
मंज मध वाहरंती मीन पिंगुला । सस कुकर अरभ कवारी ।
सर करता उश्नपं उनंनाभी ।
सपे सरो तें मे गुर राज राजन । चतोबिस्तराश्रत ॥ ४ ॥३८५॥

काया सीसमन किस्तूरी । जरनां ढकन कीजै ।
जा बिदं तैं यहु पिंड ऊपनां । सो क्यूं मग मुषि दीजै ।

---

* ग. प्रति में प्राप्त ।

सति सति भाषंत श्री देवदत्त औधूत । इन बिधि मारग गहीऐ ।
तौ बूढ़ा जोगी तै बाला ह्वै रहीऐ ॥ ५ ॥३८६॥
अहंकारस्य महाव्याधि । दीरघ रोग बिटंबनं ।
रोव बिप्री तिस री रानां । बिनं पान पद क परसते ॥ ६ ॥३८७॥
निरालंबो पद प्रापतं । चिंतते अचल मता ।
नृवंती सरब कृया । तसि मुनि दृष्टा परंपरा ॥ ७ ॥३८८॥
[1]बहुतानं बहु चिंतानं । दुतीया पास जु बंधन ।
ऐका ऐकी परस सुषी । ज्यूं कंवारी हाथि कंकनं ॥ ८ ॥३८९॥
जानि[2] कँ अजांनि होइबा । तत्त लेवा छांनि ।
गुरु कीया लाभै है अवधू । चेला कीयां हांनि ॥ ९ ॥३९०॥
ऐका ऐकी सिध्या नांउं । दुतीए नांम साधवा ।
च्यारि पांच केटूंबा नांऊं । दस बीस ते लसकरा ॥ १० ॥३९१॥
निराकारं च मेक ध्यांनं । उमयौ संग बिबरजितं ।
प्रकीरति रता जोगी । सात पांच भरमते ॥ ११ ॥३९२॥
आसा नाम महा दुषं । निरासा प्रम सुषं ।
आसा निरासा दोऊं त्यागी । तब सुष सोवैं तंपिंगुला ॥ १२ ॥३९३॥
धूल धूश्रांन गात्रांनं । पृथी आप समो समं ।
देवा रात्री न जांनांमं जोग बैराग ऐ लछनं ॥ १३ ॥३९४॥
दत्त दत्तं नगन सरूपं । निराससैं सुध मनसा ।
नृगुन रहत गोत्रो यथा नास्ति । नास्ति संध्या त्रपनं ।
किरीया क्रम दोऊं नास्ति । ब्रह्म ग्यांन पि लछनं ॥ १४ ॥३९५॥
गगन सने फल समंद्रं । ब्रह्म सक्ति निज दया ।
जिभ्या स्वाद बिबरिजितं । इन्द्रीयां स्वादं प्रत्तजिते ।
कंद्रपो द्रपनो जस्य । ब्रह्म ग्यांनौपि लछनं ॥ १५ ॥३९६॥
दत्त जु लागा तत सूं । तत्त दत्त ही मांहि ।
दत्त तत्त ऐकै भया । अब दूजा कोऊ नांहि ॥ १६ ॥३९७॥*
अवगत्तं च अक्षरं षितस्य आकारं । यस्य रूप षिरंति ।
तस्य भूत काम स्थिरं ॥ १७ ॥३९८॥

---

१. तु०—पद संख्या ३६७, २. पद संख्या ३६५ से तु०;
* ३७७ वें पद से तुलनीय ।

अवगत्तं च अक्षरं बीज बिबरजित तरवरं ।
त्रिय लोक तस्य छाया । स्वादं जानंत ते बीत रागं ॥ १८ ॥३९९॥

अलप अहारं बड़ा बिचारं । काया कसना मुष नहिं हंसनां ।
तब जाइ जोगी । सरबस भोगी अैसा जोगी ॥ १९ ॥४००॥

अलम भिछ्या काया रछ्या । पांचूं चेला आरंभ मेटै ।
तब जाइ जोगी सरबस भोगी । अैसा जोगी ॥ २० ॥४०१॥

इंद्री जीतं अलष अतीतं । तामस त्यागं दिठ वैरागं ।
रहत अकेलं मन सूं वेलं । तब जाइ जोगी सरबस भोगी अैसा जोगी ॥२१॥४०२॥

दिष्टि आदिष्टं मंन न मुष्टं । पाप न पुनि जोति न सुन्यं ।
ताहू आगै करम न लागै । तब जाइ जोगी सरबस भोगी अैसा जोगी ॥२२॥४०३॥

ग्रांमे ग्रांमे पुस्तग पुंज पुंजे । पुरो पुरी ब्रह्मा वेद बकंता ।
नव लष कोटी कोई ततबेता ॥ २३ ॥४०४॥

नादो न विंदो कलपानां न छाया । मनोरथो न माया आगामो न नगमो ।
अवधूत न बिग्यांन मांटी न छाया । कलनां रह तत्तसई ।
सुधनां ना त आलमां ॥ २४ ॥४०५॥

आनंद मूलं प्रातम त्ततं । संकलप बिकलप मोह न मुक्तं ।
सुभांइ लीला बिचारति नितं । त्मेव जोगी आतम ततं ॥ २५ ॥४०६॥

निरबासनां निरालंबो । छछंद मुक्तो बंधनात् ।
छिप्त सै सक्ति मात्रेनं । चिष्टंत सुषं प्रनवत ॥ २६ ॥४०७॥

जल मधे धरती नास्ति । आकासे प्रवरतत्तो ।
ब्रह्म ग्यांनी स्थूल नास्ति । पूरन ब्रह्म सनातनं ॥ २७ ॥४०८॥

आपा नास्ति परा नास्ति । नास्ति काया कलि विषं ।
बुधि बासनां मनो नास्ति । तत्र देव निरंजनं ॥ २८ ॥४०९॥

॥ इति सिधूं की सबदी संपूर्णं ॥

———

१३--देवल जी की सबदी

देवल भया[१] दिसंतरी । सब जग देषा[२] जोइ ॥
नादी[३] बेदी बहु[४] मिलै । परभेदो[५] मिलै न कोइ ॥१॥४१०॥
देवल निह केवल भया[६] । सुरति निरति ले बोलि ॥
ज्ञान रतन की कोथली । काहू[७] पारिष आगे षोलि ॥२॥४११॥
देवल जिभ्या बंद[८] दे । बहु[९] बोलतां[१०] निवारि ॥
सारिषा स्यूं[११] संग करि । गुरु मुष ज्ञान विचारि[१२] ॥३॥४१२॥
पारष नर नही पटंतरै[१३] । सबदी[१४] मोल न तोल ॥
देवल देषि विचारि[१५] करि । तौ बोली जै बोलि[१६] ॥४॥४१३॥

१४--धूधलीमल जी की सबदी

आइस जी आवो ॥
बाबा आवत जात बहुत जुग बीता[१७] । कछू न चढ़िया हाथं ॥
इब का आवण सूफल फलिया । पाया निरंजन नाथं ॥१॥४१४॥

आइस जी आवो ॥
बाबा जे आया ते जा दूर रहैगा । तामैं कैसा संसा ॥
बिछुरन वेलां मरन दुहेला । को जांणैं कत बासा ॥२॥४१५॥

आइस जी बैठो ॥
बाबा बैठा ऊठी उठा बैठी । बैठि ऊठि जग दीठा ॥
घरि घरि रावल भिष्षा मांगैं । इक अभी महारस मीठा ॥३॥४१६॥

आइस जी ऊभा ॥
बाबा जे ऊभे ते इक टग ऊभा । स्यंम समाधि लगाई ॥
उभैं रहाई कौण फाइदा । जै मन भ्रमै भाई ॥४॥४१७॥

---

१. ग, मरो; २. ग, मेल्ह्या; ३. ख, नाटी; ४. ग, बहो; ५. ग, प्रभेदो; ६. ग, भऐ; ७. ग, कहु; ८. ग, बंध; ९. ग, बहो; १०. ग, बोलणां; ११. ग, सूं; १२. ख, बिचारी; १३. ग, पंतरै; १४. ग, सबदं; १५. ग, बिचारे; १६. ग, बोले । १७—ख, दीठा ।

आइस जी आडा ॥
बाबा जे आडा तिनि गहि गुण गोडा । नौ दरवाजा ताली ॥
जोग जुगति करि सनमुष लागा । पंच पचीसौं बाली ॥५॥४१८॥

आइस जी सोवो ॥
बाबा जे सूता ते षरा विगूता[1] । जनम गया अरु हार्या ॥
काया हिरणी काल अहेड़ी । हम देषत जग मार्या ॥६॥४१९॥
आइस जी जागौ ॥
बाबा जे जाग्या ते जुगि जुगि जाग्या । कह्यां सुण्यां सूं[2] कैसा ॥
गगन मंडल मैं तालो लागी । जोग पंथ है ऐसा ॥७॥४२०॥

आइस जी मरौ ॥
बाबा हम भी मरणां तुम भी मरणां । मरणां सब[3] संसारं ॥
सुर नर गंण गध्रब भी मरणा । कोई बिरला उतरै पारं ॥८॥४२१॥
आइस जी जीवौ ॥
बाबा जे जीया ते निति ही जीया[4] । मार्या ते सब मूवा ॥
जोग जुगति करि पवनां साध्या । सो अजरांवर हूवा ॥९॥४२२॥

आइस जी ठगौ ॥
बाबा ठगिया ते तौ मनवै ठगिया । अरु ठगिया जम कालं ॥
हम तौ जोगी निरंतर रहिया । तजिया माया जालं ॥१०॥४२३॥
आइस जी फेरीयै ॥
बाबा जे फैरैं तौ मन कूं फेरै । दस दरवाजा घेरै ॥
अरध उरध बिचि[5] ताली लावै । नौ निधि अठ सिधि मेरै ॥११॥४२४॥
आइस जी धंधै लागौ ॥
बाबा गोरष धंधै अहि निसि इक मनि । जोग जुगति सूं जागै[6] ।
काल व्याल का भै नहिं व्यापै[7] । नाथ निरंजनि लागै ॥१२॥४२५॥

---

१. ख, विगूला;
२. ग, सो; ३. ग, सकल;
४. पाठान्तर ख, प्रति :—
बाबा जे जीव्या ते नित ही जीव्या ।
५. ग, मध; ६. ख, लागैं;
७. ख, भै हम देषा;

आइस जी देषौ ।
बाबा इहां भी दीठा उहां भी दीठा । दीठा सकल संसारं[1] ॥
उलटि पलटि निज तत चीन्हिबा । मन सूं करिबा विचारं ॥१३॥४२६॥

चौरासी पाटल ऊधा मार्‌या ता समया की कथा ॥

आइस जी ठगावै[2]
बाबा जिन रे ठगाया तिन सध पाया । तजि षेचर बुधि मति बोलै ॥
जैसा कमावै तैसा पावै । सति सति भाषै घूंधली मोलै ॥१४॥४२७॥

———

१५--नागा अरजन जी की सबदी*

दारु तै दाष उतपनी । दाष कथो नहीं जाई ।
दास दारु जब[3] परचा भया । दाष मैं दारू समाई ॥
पूरब उतपति पछिम निरंतर । उतपति परलै काया ।
अमि अंतरि पिंड छाड़ि । प्रांन भरपूर रहै ।
सिध संकेत नागा अरजन कहै ॥ १ ॥४२८ ॥
आपा मेटिला सतगुर थापिला । न करिबा जोग जुगति का हेला ।
उनमन डोरी जब षैंचीला । तब सहज जोति का मेला ॥ २ ॥४२९॥

———

१६—पारबती जी की सबदी

जल मल मरीला[4] नल । अगनि न जलै[5] नाभी कै तल[6] ॥
अगनि न बलै न परसै[7] किरण ।
ता कारणि पारबती जगत[8] का मरंण[9] ॥ १ ॥४३०॥
अहूठ हाथ कंथड़ी जल मल मरी । नासिका का पवन न षेलै नाम की तली ॥

१—ख, पसारं ।
२—ग, प्रति में यह पद अधिक है ।
* क और ग प्रति में प्राप्त ।
३—क में नहीं है ।
४-ग. भरीया; ५-ग. बलै; ६—ख. तले; ७-ग. प्रगट; ८—ग. जगत्र; ९—ग. मर्नं;

उलटै पवनां गगन समाई ।
ता कारणि पारबती ये पसुवा मरि मरि जाई ॥ २ ॥४३१॥
रूष बिरष गिर कंदलि बास । त्रिगुण[1] कंथा रहे उदास ॥
भिष्षा भोजन सहज में फिरै[2] । ताकी सेवा पारबती करै ॥ ३ ॥४३२॥
काग द्रिष्टी बगो ध्यानी बाल । अवस्था भुयंग[3] अहारी ॥
सो अवधूत बैरागी पारबती दूजा सब भेषारी ॥ ४ ॥४३३॥
धन जोबन की करे न आस । चित न राषै कामणि पास ॥
नाद बिंद जाके घटि[4] जरै । ताकी सेवा पारबती करै ॥ ५ ॥४३४॥
त्रिगुण[5] कंथा बहु बिस्तार । जुगति निरंतरि[6] रहनि[7] अपार ॥
नान ब्रिंद जाकै घटि जरैं । ताकी सेवा पारबती करैं ॥ ६ ॥४३५॥
*निसप्रेही निहस्वादी । काम दग्धी दिने दिने ॥
तास भिष्षा दे देवी पारबती । मोछि मुक्ति तत छिने ॥ ७ ॥४३६॥

१७—प्रिथीनाथ जी का ग्रंथ साध प्रष्ण †(१)

अस्थानं[8] बिन नग्री अलेष दरवाजा । सत संतोष वजीरं ॥
पंच चोरं गहि पड़ दार जीतिवा[9] । ते जोगी बलबीरं ॥ १ ॥४३७॥
बिचार मंत्री बमेक पाइक । चित चेतानि कुटवालं ॥
नौ लष घाटी मन ले रूंधिबा । तब जीति लीया जम कालं ॥ २ ॥४३८॥
विषै कलपना पग दे चांपो । धोषा बंधि बहाया ॥
कहि प्रिथीनाथ तब अदलि भणीजै । सुषी बसै गढ काया ॥ ३ ॥४३९॥[10]
रहणि हमारी तषत भणीजै । मन[11] पवन दोइ घोड़ा ॥
सबद हमारा षरतर षांड़ा । जिनि जम सौं कीया नबेड़ा ॥ ४ ॥४४०॥
गगन हमारा बाजा बाजै । मूल मंत्र भल हाथी ॥
मंसै काल गुर मुषि तोड्या । पंच पुरिष मेरे साथी ॥ ५ ॥४४१॥

१—ग. निर्धन; २—ख. फुरै; ३—ग. भवंगम; ४—ग. घट । ५—ग. निर्धन; ६—ग. निरंतर; ७—ख. रहण ।

* यह पद केवल ग प्रति में ही नहीं है ।

† क—साध परष्या ग्रंथ ।

८—ख. सथानं; ९—क. जीत्या; १०—यह पद्य केवल 'ख' प्रति में है; ११-ख. पन ।

जुगति हमारी छत्र सिंहासन । महाशक्ति रिणवासं ॥
पृथीनाथ ते पुरिष बिचषिण । मंदिर रच्या अकासं ॥ ६ ॥४४२॥
बड़ा मैवासा काया जीती । मन सूं करि हथियारं ॥
कहि पृथीनाथ मेरी तहां कटकई । जिनि मुसिया सकल संसारं ॥ ७ ॥४४३॥
गण गंध्रप जिनि सवै संघारै । दल बल के अधिकारी ॥
सो बंदर हम बस करि लीया । जिनि जीत्या बल भारी ॥ ८ ॥४४४॥
मन जीत्या तिनि त्रिभुवन जीत्या । जीती सुंदर काया ॥
गले पाव दे जौंरा जीत्या । जीतिआ प्रबल माया ॥ ९ ॥४४५॥
उतपति प्रलै दोऊ जीत्या । कहि प्रिथीनाथ ए भारी ॥
विषम जूझ करि पुरिष होत । तिस घरि रहनि हमारी ॥ १० ॥४४६॥
जो पद कथ्या योग वासिष्ट । धरि यह रामा औतारं ॥
तिन भी आइर गुर कीया । तिरिबे कूं संसारं ॥ ११ ॥४४७॥
सहस नाम संकरि कथ्या । ब्रह्मज्ञानं सुषदेवं ॥
गीता होइ कृष्ण कथी । भगति भजन को भेवं ॥ १२ ॥४४८॥
वेद होइ ब्रह्मा कथ्या । नारद कथ्या सुकाई ॥
जिनि उपदेसैं ध्रू भया । प्रगव्या सब जग मांहि ॥ १३ ॥४४९॥
प्रिथीनाथ नामदेव कऊ कथ्या । क्या बोल्या हणवंत ॥
जिस करनी तैं[1] पद भया । षिण मैं पहुँता लंक ॥ १४ ॥४५०॥
राजा जनक भया तिनि क्या कथ्या । क्या प्रह्लाद कबीरं ॥
सो पद काहे ना षोजिये । जिहिं उधरैं सरीरं ॥ १५ ॥४५१॥
मारकंड मुनि क्या कथ्या । क्या बोल्या गोरषनाथं ॥
जिस करणी पूरण भया । तन मन आया हाथं ॥ १६ ॥४५२॥
इहै भगति भगवंत बसि । पुरिष भये सब पार ॥
प्रिथीनाथ अनंत मुनि । इन मैं किन घूं कथ्या सिंगार ॥ १७ ॥४५३॥
जिस करणीं तैं[2] डूबिए । यहु मन तन थैं भंग ॥
कहि धूं गोविंद कब कीया । पर नारी सूं संग ॥ १८ ॥४५४॥
प्रतष्यां जमुना दई । जाकी बहैं अप्रबल धार ।
इहै गति[3] करि मानिये । जो घरि घरि कथैं सिंगार ॥१९॥४५५॥

१–क. थैं ; २–थैं ;
३. ख, मक्ति;

बुझ्या मदनं प्रगट कीया । सूता सरप[१] जगाइ ॥
इन बातवि जत-सत क्यूँ रहै । सपिनैं ही डिगि जाइ ॥२०॥४५६॥

आंष्या का अंधा जो धात ही न परषै । कानां का बहरा जो सबद ही न दरसै ॥
हृदा का अंधा जो पुरिस[२] ही न मानैं ।
जिह्वा का गूंगा जो स्वाद ही न जानैं ॥२१॥४५७॥
बांह का भूठा दांन करि षूंटा । पांव का लूला जिनि संत न ठूंठा ॥
भगति का हीणा जिनि रामं न पाया । जनम वृथा संसार में आया ॥२२॥४५८॥

पृथीनाथ ने यूं ही गया । जिनहिं न पाया भेव ॥
जे समझ्या ते निस्तरचा । हूवा निरंजन देव ॥२३॥४५९॥
चेला दुषी तौ गुरु पीर लाजा । बांह का भूठा न सेयिये राजा ॥
सबद हीन बिंदै तो पढ़िबा[३] का षोटा ।
ऊठि बैठि न सकै तौ किस कांमि मोटा ॥२४॥४६०॥
जौ मरि जाइ तौ जलि जाइ माया ।
आप न समझ्या तौ मिथ्या यहु काया ॥२५॥४६१॥

प्रिथीनाथ कत सेवियै । जिनके पासि ग्यांन सचुनांहि ॥
ज्यूं पंथी षाली पड़ै । ऊंजड़ नगरी मांहि ॥२६॥४६२॥
जे यहु ब्रह्म अषंड पद । तौ मरि मरि काहे जाइ ॥
जे यहु व्यापक श्रब मैं । तो क्या तप तीरथ मांहि ॥२७॥४६३॥
बन बन हाटैं मुक्ति कै । तौ पसु पंषी सैवार ॥
माया मैं जे डूब्रिये । तौ जंनक मथा क्यूं पार ॥२८॥४६४॥

प्रिथीनाथ इतनी बात न बिदही । तिन का क्या उपदेस ॥
कापुरिसां की नारि ज्यूं । घर ही मांहि[४] बदेस ॥२९॥४६५॥
मल मुत्र तैं यहु तन भया । तन मन हरि मैं सोइ ॥
जबहीं यह उजल[५] करि लीजै । तबही बसेरा होइ ॥३०॥४६६॥
जे मन बसि होइ तौ हरि सौं मेला । हरि भेंटै भगवंत ॥
जिनि इतनी बस्त बिचारी नाहीं । आइ वृथा जे जंत ॥३१॥४६७॥
जैसे तिल में तेल बसत है । काष्ठ भीतरि आगि ॥
दहून मथि दीपक कीया । तब कछू सूझन लागि ॥३२॥४६८॥

---

१. क, श्रप; २. ख, परष ३. ख, पढ़ाबा; ।
४. क, माहि । ५. क, उलटि फिरि ।

प्रिथीनाथ कहै ते बिरला । जे निज जपै समान ॥
मन मनसा जब एक करैगा । तब दूरि नहीं भगवान ॥३३॥४६९॥
प्रिथी का गुण देह । प्राण गुण सूरं ।
बाइका गुण स्वास । रहत मन मूरं ॥ ३४ ॥४७०॥
अनील का जोला ताहि पंच तत लागे । तिनही बसि कीया जे गुर मुषि जागे ॥
॥ ३५ ॥४७१॥
कहि प्रिथीनाथ यह अकथ कहांणी । यौं पुनि नांही पाइए ॥
जिनि यहु भेद न जांणी ॥ ३६ ॥४७२॥
यहु मन जीतिहूँ यहु मन धरिहूँ । धोषा ऊपरि चित न करिहूँ ॥
ज्यूं ज्यूं आवै त्यूं त्यूं लैहूँ । यंन्द्री प्रांण पुरिस कौं जांण न दैहूँ ॥ ३७ ॥४७३॥
प्रिथीनाथ कहै सब सब सत । इस बिधि पुरिसा सिव पुरि जंत ॥
जनम नहीं अंकूर बिन । सड़्या सु जामै नांहि ॥
ते क्या जामैं बापुड़ा । सदा कल्पना मांहि ॥ ३८ ॥४७४॥
जतन करै तो नेड़ा निपजै । सूभर भरिया खेत ॥
प्रिथीनाथ ते मरि औतरे । जे अंमर सदा सचेत ॥ ३९ ॥४७५॥
मन पवन सब जगत कथत है । तत कथत सब कोई ॥
ए पंचूं[1] आतमा पंचूं पैडै । इनका कहां बसेरा होई ॥ ४० ॥४७६॥
यहु गावै कथै श्रव[2] रस भोगी । बोलत है घट वैसा ॥
प्रिथिनाथ कहै सुनि रे पंडित । इनका रूप बरन गुन कैसा ॥ ४१ ॥४७७॥
जे यहु लषं सु गुर का पूरा । भेद हि भाव विचारै ॥
तिसकी नाव न छूटै हंस डूवे । सदा अपनपौ तारै ॥ ४२ ॥४७८॥
सब कोई कहै पंच बस कीजै । बहुरि कहै देह भरोसा नांहि ॥
इनकैं बिनसैं पंचू आतमां । कहौ पंडित किस ठांइ[3] ॥ ४३ ॥४७९॥
तिहि ठांइ पंच बसेरा भांडै[4] । जो अगंम गवंन करि जाणै ॥
सबद बिहूना रूप बिबरजित । जे[5] पद बीचि वषाणै ॥ ४४ ॥४८०॥
तातैं दूरि ब्रह्म[6] क्यूं कहिये । जाकै हिरदै यहु रस आवै ॥
प्रिथीनाथ कहै ते सतगुर । जो यह भेद बतावै ॥ ४५ ॥४८१॥

१—क. पांचूं ; २—क. सर्वं ।
३—क. बांह; ४—क. मांडहि;
५—क. ते; ६—क. क्रिश्न;

उपजी होइ तौ मन क्यूं माजै । पांहृण लिख्या सु सारं ॥
मिथ्या मिटै न मोज्या बिनसै । अैसा तत्त बिचारं ॥ ४६ ॥४८२॥
गऊ मैं षोर होइ पालत भरपूरं । संजम पालै तौ मन कै थीरं ॥
साधक कूं सेवै तो मुक्ति[1] की आसा । आत्म बिंदै तौ वैकुंठि बासा ॥४७॥४८३॥
कथत प्रिथिनाथ जिनि यहु भेद बूझा । साष्षावंत देवता त्रिभुवन सूझ्या ॥४८॥४८४॥
प्रिथीनाथ बन बन सब जग फिरचा । सब कांटे का रूष ॥
उह फल बिरला पाईये । जाथैं भाजै भूख ॥ ४९ ॥४८५॥
षट दरसन षट साखी । इनकी कलपत ही दिन जाहिं ॥
स्थिर कोई बिरला रहै । बाकी सबै बहावणि[2] मांहि ॥ ५० ॥४८६॥
सब प्रिथी कांटे भरी । अंतरि ब्यापैं सूल ॥
प्रिथीनाथ हरि की भगति बिन । ते नर बृष[3] बंबूल ॥ ५१ ॥४८७॥
साध पुरिष चंदन बिड़ी । रनै बनै वै नांहि ॥
सबै पाय षिण मैं कहैं । जे उन मांहि समांहि ॥ ५२ ॥४८८॥
हेम होइ जे ढेट के । तऊ बानी अधिकाई ॥
जे होइ साधु कुठांई । तऊ का महिमा जाई ॥ ५३ ॥४८९॥
सब काहू कै पूजि । जुगति अपनी करि ध्यावै ॥
जे यहु मधिम पुरिषा । तऊ देवता कहावै ॥ ५४ ॥४९०॥
साध पुरिष नित ऊजला । मलिनहिं करैं पवित्त ॥
साधु[4] पुरिष तिस घरि नहीं । जिनका घोषै बिलंबे[5] चित्त ॥ ५५ ॥४९१॥
रामनाम सब कोइ कहै । सब ईश्वर कौं ध्यावैं ॥
दुरगा सब के पुजि । सबै गणपति मनावैं ॥ ५६ ॥४९२॥
इनकै जाति भेद कुल नाहीं । पुरिष सबकै उपगारी ॥
ताही कूं बर देइ । सदा सेवैं अधिकारी ॥ ५७ ॥४९३॥
धन षरचै मैं नाहिं । वेद भागौत वषाणैं ॥
तिस ठांइ पुरिष नहीं मिलै । अधिक चतुराई ठांणें ॥ ५८ ॥४९४॥
साध पुरिष इनकै जाति कुजाति न पूछिये । पढ़ि मलि ग्रवै[6] कोई ॥
तिस ठांइ पुरिष नहिं पाइये । जिनकै धोषा दुबिध्या होई ॥५९॥४९५॥

१–क. मुकति; २–क, वहाउणि;
३–क, बिरथा; ४–क, महा;
५–क, बिलंब्या; ६–क, गरबै ।

साध साध सब कोइ कहै । साध की परष न जांनै ।।
धोषा टेक न तजै । सबद ही कैसैं माने ।। ६० ।।४९६।।
सति बचन पर हरै । झूठ की सेवा लागै ।।
परपंची की मांनि । साधू देष्या उठि भांगै ।। ६१ ।।४९७।।
प्रिथीनाथ ए साध बचन नित ही सुणैं । परष नहीं घट मांहि ।।
घर आए साधहि तजै । घोषा सेवण जांहि ।। ६२ ।।४९८।।

ए बात कथै क्यूं साधू मानैं । प्रतषि सौं उठि बादैं ।।
साधु पुरिष करि सोचैं । कोई बिसवास न मानैं ।। ६३ ।।४९९।।
कोई उठि झगड़ै लागैं । जे बोलै तौ वाकी बात न मानैं ।।
अपणां फिरि करि लावैं ।
धोषा मिटै न मन की छूटै । साध बचन क्यूं पावै ।। ६४ ।।५००।।
साधू कै कछु सोच न संका । डंभ आडम्बर नाहीं ।।
प्रिथीनाथ साध कहा सनमुष । जिनके परष नहीं घट मांहि ।। ६५ ।।५०१।।

सबै परष आसांन । साध की परष न आवै ।।
हीरे हूं की परष न । जुगति जौहरी बतावै ।। ६६ ।।५०२।।
दरिया ही की परष । जहां मोती का बासा ।।
चंद सूर की परष । गहण गति लषी अकासा ।। ६७ ।।५०३।।

रस बास की परष । सो जु यंद्री धरि चाषो ।।
परबत हूं की परष । धात जिनि गुप्त राषी ।। ६८ ।।५०४।।
जल थल ही की परष । सबहिं न की आई ।।
सुनि प्रिथीनाथ अचंभ गति । साधि गति लषी न जाई ।। ६९ । ५०५।।
साध पुरिष चीन्ह्या नहीं । जे बहि पड़े जंजालि ।।
परष बिहूणीं इहै गति । ज्यूं बलि ले दीया पतालि ।। ७० ।।५०६।।

प्रिथीनाथ पुरिष की इहै परष्या । तन मन जीत्यां फिरै ।।
रहै तौ अपणां पंछचा ।। ७१ ।।५०७।।
आराधें कौं साध विरोधें फल दीन्हा ।
छप्पन कोटि आवष्षा[1] । कहा दुरबासा कीन्हा ।। ७२ ।।५०८।।
तिस पै उपाजी इहै । जहां साधू दुष पावै ।
जिस पै धोषा घणं । तहां निहचल क्यूं आवै ।। ७३ ।।५०९।।

---

१. क, अवछ्य;

अभिमानी क्यूं लषि । जिनि आतमां न जीती ।
तब क्या बेदन होत । जब बलि कौं होइ बीती ॥ ७४ ॥५१०॥
प्रिथीनाथ परष बिन । पढि मति ग्रबै कोइ ॥
जिस ठांइ साध न संचर । तहां स्वांति कहां ते होइ ॥ ७५ ॥५११॥

सोनां की कालिमां । सौनैं करि सूझै ॥
सबद मांहि तत सबद कहौ जौं कैसें बूझै ॥ ७६ ॥५१२॥
बाइ मांहि तत बाइ । कहौ धौं कैसें जांणैं ॥
पांणी मथि करि घृत । कहौ कैसी बिधि आणैं ॥ ७७ ॥५१३॥

तब गोव्यंदहि पाइए । जब या अरथहि काढ़ै ॥
नहीं गावै कथै अधिक । दिन दिन संक्या बाढ़ै[1] ॥ ७८ ॥५१४॥
भावै जप तप करै । कोटि तीरथ कौं धावै ॥
जीवत सती न होइ । जुगती बिन पदहिं न पावै ॥७९॥५१५॥
प्रिथीनाथ परष जब । जब गुर पूरा होई ॥
नाहीं तौ नर देही नांगां गई । जाकै हिरदैं रम्यां न कोई ॥८०॥५१६॥

साध पुरिष कै मिलैं । भई मुषि अंमृत बांणीं ॥
साध पुरिष कै मिलैं । गुप्त प्रगट करि जांणीं ।८१।५१७॥
साध पुरिष कै मिलैं । अंध घट दीपक दीया[2] ॥
साध पुरिष कैं मिले । ब्रह्म आपण कर लीया ॥८२।५१८॥

साधु पुरिष कैं मिलैं । ध्रू निहचल करि बैसा ॥
साध पुरिष कैं मिलें । मुक्ति का किसा अंदेसा ॥८३॥५१९॥
अस्वमेध जज्ञ कीयें । कोटि तीरथ के न्हायें ॥
इतना तत फल होइ । साध के दरसन पायें ॥८४॥५२०॥
साधू बोहित अभै पद । दरसन देष्या पार ॥
पृथीनाथ दुर्लभ है । उन साधू का दीदार ।८५।५२१॥

साध पुरिष कै मिलें । मर्म की संक्या तूटै ॥
साध पुरिष कै मिलैं । ताहि तसकर नहिं लूटै ॥८६॥५२२॥
साध पुरिष कै मिलें । दृष्टि बाहिर न आणैं ॥
साधु पुरिष कै मिलें । आप आपहि पहिचाणैं ॥८७॥५२३॥

---

१. ख, प्रति में ये दो पंक्तियाँ छूट गई हैं ।

२. क, कीया ।

साध पुरिष कै मिलैं । दुष दुंदरता भागै ।।
साधु पुरिष कै मिलैं । भरम की सूलि न लागै । ८८।.५२४।।

साध पुरिष कै मिलैं । कृष्ण गति हिरदै बैसी ।।
साधु पुरिष कैं मिलैं । कहो दुबिधा मति कैसी ।।८९।।५२५।।

प्रिथीनाथ संगति फिऱ्या । बिश्राम्यां यहु चित्त ।।
अंधकार धोषा मिटया । तन मन भया पवित्त ।।९०।।५२६।

प्रिथीनाथ साध पुरिष कौं । ते क्या जानैं ।।
धोषा माहैं मिलि रहै । और कौ विस्वास न मानै ।।९१।।५२७।।

क्या बहु विद्या पढे । कहा उपदेसै दीन्हें ।।
यहु सब मिथ्या जांणि । बिना साधू कै चीन्हें ।।९२।।५२८।।

सब जग कलपत फिरैं । पुरिष का चित्त न डोलै[1] ।।
संसै सूल न रहै । जब मुषि अमृत बोले ।।९३।।५२९।।

सींचत ही फल देइ । बिरष के तजे न छाया ।।
तिस ठांइ[2] साध रमैं । जहां बाछा सचु पाया ।। ९४ ।।५३०।।

दरसन तें[3] पद पाइए । जे बो[4] साधू होत ।।
जिस ठाहर मन मेलिबो । तहां जगु रहत उदोत ।। ९५ ।।५३१।।

इत उत की द्वै मिलि । साधू के बचन नहिं षंडै ।।
साधु पुरिष क्या करैं । वै आप आपन पौ भंडै ।। ९६ ।।५३२।।

साधू मिलैं थैं साधू होई । उठि करि लागैं संगा ।।
जे समझै तौ दीपक । परष बिन पड़े पतंगा ।। ९७ ।।५३३।।

हिरदै उपजी बिना । साधकौं कैसे जोवैं ।।
मन कौं जीति न सकैं । सबै पिछले दिन रोवैं ।। ९८ ।।५३४।।

प्रिथीनाथ दरसन नहीं । अभिमानी अज्ञांण ।।
गुरू गोरष चीन्ह्या नहीं । ते सब भये पषांण ।। ९९ ।।५३५।।

पहिलि संमझि न पड़ै । धका लागै थैं जाणैं ।।
बिगड़ी ऊपरि सबै । ताहि ईस्वर करि मानै ।। १०० ।।५३६।।

इहे गति संसार । पुरिष का मरम न पावै ।।
जे हरि समझ्या होइ । ब्रह्मा क्यूं बछ चुरावै ।। १०१।।५३७।।

---

१. ख, झोलै २. क. ठारहि;
३. क. थैं; ४. जो. ओ;

साध सदा ही मिलैं । मुगध को कहां समझावै ॥
तब महिमा अति करै । जब विपरीति दिखावै ॥ १०२ ॥५३८॥
कलह करामाति पति निधि । साध संताये कोय ॥
चांपै थैं आगैं षड़ैं । जो पद रह्या अलोय ॥ १०३ ॥५३९॥
वक्ता च भवे ज्ञानी श्रुत्वां मोक्ष लभिते[1] ।
बक्ता श्रुत्वा नं ज्ञांनामि[2] वृथा तस्य[3] जीवनं ॥

इति श्री प्रिथीनाथ सूत्रधारे मत महापुराणे सिघ नाम श्री साध परष्या जोग ग्रंथ[4] संपूरण[5]

॥ सुभमस्तु ॥

श्री पृथ्वीनाथ जी का 'श्री निरंजन निरबांन' ग्रंथ (२)

छाया छत्र न सिधि भरोसा । मन पवन छै नांही ॥
आया पर कछु दूरि न नेड़ा । तिस भर विरला जांही ॥ १ ॥५४०॥
लघ दीरघ दोई न्यौली नांहीं । संष पषालैं काया ॥
बाघी करम लंबिका साधैं । तिन भी तत्त न पाया ॥ २ ॥५४१॥
मनसा अग्र व्यंब करि पूजै । माला मंत्र धरि ध्यानं ॥
ताली पीटि नासिका चितवै । ए सब फोकट ग्यांनं ॥ ३ ॥५४२॥
इन्द्री बंधैं पवन निरोधैं । कसि बांधै उडियांणीं ॥
संख्या सूत्र ते पद नांही । ए बादि बिलोवै पांणीं ॥ ४ ॥५४३॥
आसण बैसण जोग न होइबा । करि धरि भिष्षा षाणां ॥
पंच अगनि जल साही साधैं । धोषा मड़ै मसाणां ॥ ५ ॥५४४॥
इला प्यंगुला सहस सुषमना । रवि ससि दोइन ध्यानं ॥
पंच तत यहु सबद न होई । इंहि बिजि जगत भुलानं ॥ ६ ॥५४५॥
निद्रा जागैं निजपद नाहीं । झूठा बाद बिवादं ॥
पिरथीनाथ कहै तब पूरा । गतगुर पद परसादं ॥ ७ ॥५४६॥

---

१. क. सुरता मोषि लभते
२. क. बकता सुरता न जांनांमि
३. क. तसि; ४. क. ग्रंथ सास्त्रं; ५. क. समाप्त: ;

अकथ अनिछर बंधन मुकता । पुस्तकि लिष्या न बाणीं ॥
देवनि दुरलभ नांही अगोचर । परचै गुर-मुषि जांणीं ॥ ८ ॥५४७॥
बाहरि कहीं तौ गुरू न धीजै । भीतरि कहूँ न होई ॥
बाहरि भीतरि श्रब निरंतरि । बिरला चीन्हत कोई ॥ ९ ॥५४८॥
फेरि गहौं तो अलष अकेला । निराकार निज सारं ॥
हम बाड़ीं पैसि विसंभर भेटे । द्रिष्टि पड़े संसारं ॥ १० ॥५४९॥
फूलत फूलत भइ फिरि कलियाँ । बिरधहूँ वा फिरि बालं ॥
कहि प्रिथीनाथ हम तिस घरि बिलंबे । जहां गोधन राषत ग्वालं ॥ ११ ॥५५०॥
हम गोपाल हमें गुरु गोचर । हम मुकता हम चेला ॥
तिस घरि पैसि विचारैं आपा । जिस घरि स्यंभ अकेला ॥ १२ ॥५५१॥
बकता च भवे ज्ञानी । सुरता मोषि लभते ॥
बकदा सुरता न जानांमि । वृथा तसि जीवनं ॥ १३ ॥५५२॥

इति श्री प्रिथीनाथ सूत्रधरि मत महापुरांणे सिधि नाम श्री निरंजन निरबाण ग्रंथ ॥ जोग सास्त्र समाप्तः ॥❀

अथ श्री भक्ति वैकुंठ जोग ग्रंथ (३)

वै पंडित कोई और । भगति के भेदहि बूझै ॥
बै नेत्र कोई औंर । आदि अंतर गति सूझै ॥ १ ॥५५३॥
वै पद औरे जांणि । तास ले तीरथ कीजै ॥
बै भुजा औरै बांह । काल सिर मृदंगस्कोजै ॥ २ ॥५५४॥
वै मुष औरे जांणि । नांव लेता हरि आवै ॥
वैं श्नवण कछु और । सबद सुणत पद पावै ॥ ३ ॥५५५॥
वाह कछु औरे नांव । जास चढि हत्तर तिरी ॥
वाह करणी कछु और । जनम करि कबहू न मरी ॥ ४ ॥५५६॥
वैह ऐकादशी कछु औरै । जास जागत जम भागै ॥
वह उपदेस कछु और । करम का काटन लागैं ॥ ५ ॥५५७॥

❀ क. प्रति से ।

वह फासू कछु और । जास पीवैंत ल्यो लागैं ॥
वह जीव दसा कछु और । पिंड तजि प्रांण न मागै ॥ ६ ॥५५८॥
वह मुद्रा कछु और । जास मूंडे सिधि पाई ॥
इस बिधि जोगहि मिलैं । और सब पंथ बताई ॥ ७ ॥५५९॥
वह तिलक कछु और । जास दीऐ गति सोई ॥
वा माला कछु और । जास फेरत सुध पाई ॥ ८ ॥५६०॥
वाह पूजा कछु और । जहाँ कछु देव न पाती ।
सब तैं भिनिं पसाव । तहाँ कुलदेव न जासी ॥ ९ ॥५६१॥
वह षटकरम कछु और । जास करतां मल धोवै ।
वह आचार कछु और । सदा कंटक दुष षोवै ॥ १० ॥५६२॥
वा गावत्री कछु और । जास जपैं सिधि पाई ।
वा गंगा कछु और । सिध्यां ले ब्रह्मण्ड चढाई ॥ ११ ॥५६३॥
पृथीनाथ बवेक बिन । अैसैं जे जागै ।
षट दरश्न तैं भिनि । पुरिष निपजै तंहां आगै ॥ १२ ॥५६४॥
यह अकथ कथा आकार बिन । कथैं बंदैं पद तिनि ।
पद परष्या नैंनन कंवल । पुरिष भऐ के निहन ॥ १३ ॥५६५॥
वक्ता च भवे ग्यांनी । श्रुता मोषि लभते ।
वक्ता सुरता न जांनांमि । बृथा तसि जीवनं ॥ १४ ॥५६६॥

॥ इति श्री पृथ्वीनाथ सुत्रधारे मतमहापुरांणे सिध्य नांम श्री भक्ति बैकूंठ ग्रंथ जोग सासत्र संपूर्ण समापता ॥*

अथ पृथीनाथ जी की सबदी (४)

हंस चढ्या सांमर तिरौं । स्यंघ चढ्या बन मांहि ॥
हस्ती या षर मेल्हि करि । मन सौं कूकण जांहि ॥१॥५६७॥
सोऊं तौ हाथि न आवई । जागूं तौ भागा जाई ॥
मन ही सेती कूकणां । बाघु हुवा जग षाइ ॥२॥५६८॥
राजा षाए राज मैं । अरु पंडित कोटि अनंत ॥
मन का जीत्या बाहरा । सब जग देषा जंत ॥३॥५६९॥

---

* क. और ग. प्रति से ।

पृथीनाथ जिनि मन अपनां बसि कीया । ताथैं बड़ा न कोइ ॥
अठसठि तीरथ कोटि जज्ञ । जाकै दरसन ही फल होइ ॥४॥५७०॥
लोहा की कीमति नहीं । जो कंचन कूं चाहै ॥
गोहूं कै काजि तप करै । कांटि गाडर कोउ गाहै ॥५॥५७१॥
पृथीनाथ पारस सरब घटि । घट भीतरि लोह ॥
बिम्ह भगति क्यूं ऊपजै । जिन्हहिं विषय का मोह ॥६॥५७२॥
पृथीनाथ घर का दंद मैं । आपु गंवांया जांहि ॥
लादन हारा चलि गया । गूंणि रही घर मांहि ॥७॥५७३॥
पृथीनाथ रांड़ी के बांधे मरहिं । छाड़ि न सकहीं साथ ॥
गलि बांदर के जेवड़ी । ज्यूं बाजीगर के हाथ ॥८॥५७४॥
जे सम केते भये थिर । अन समझे बहि जंत ॥
अठसठि तीरथ कोटि जज्ञ । जहां विल बहिसंत ॥९॥५७५॥
कंवल द्वादस तलैं अग्नि बहु प्रजलै । रवि ससि गत तत भांण जागै ॥
पहरा रैंणि पड़ै काल सेती लड़ै । पिंड कौ छोड़ि प्रांण कबहूं न भागै ॥१०॥५७६॥

अैसी धरणी घरै सहजहीं निस्तरै । बादबक बाद तैं देह छीजै ॥
गुरु साषी कहै सिष सोई गहै । उलटि बांबई श्रप षाया ॥
पूजि रे भोजिगी[1] देव आगैं षड़ा । रहसि रहसि देहु रै नाद बाया ॥११॥५७७॥
गगन आसणय करै सिवपुरी संचरै । सुंनि मैं धुंनि तहां नाद बाजै ॥
अषंड दीपक जरै ब्रह्म गोष्ठी करै । पंच जन बैठा एक छाजै ॥१२॥५७८॥
पंच दम मोड़िबा काया गढ तोड़िबा । अह निसा कूजिबा मारि मीरं ॥
आपकों मेटिबा ब्रह्म कौं भेंटिबा । गगन आसण करि थीरं ॥१३॥५७९॥❀

———

१८—बालनाथ जी की सबदी

चहुँ दिसि जोगी सदा मलंग । षेलै बर कांमिनि इक संग ॥
हंसै षेलै राषै भाव । राषै काया गढ़ का राव ॥ १ ॥५८०॥

१—ग. प्रति में 'भोजिग' ।
❀ ख. और ग. प्रति से । ख. प्रति में पद्य-क्रम भिन्न प्रकार से है, पद्य सं० ६-९ तक इसमें अंत में आए हैं ।

दस दरवाजा राषै बांण । भीतरि चोर न देई जांण ॥
ज्ञान कछोटी बांधैं कसि । पांचौ इन्द्री राषै बसि ॥ २ ॥५८१॥

पवन पियाला मषिबौ करै । उनमनी तालो जुगि जुगि धरै ॥
रामैं आगै लषमण कहै । जोगी होइ सु इहि बिधि रहै ॥ ३ ॥५८२॥

अन्प बिंद तैं दुनियाँ उपनी । बहुता बिंद तैं षोया ॥
गए बिंद की षबरि न जानी । मूये बिंद कूं रोया ॥ ४ ॥५८३॥

पहली कीया लड़का लड़की । पीछै पंथ में पैठा ॥
बूढै षालड़ि भसम लगाई । भरथरी बज्र जती होइ बैठा ॥ ५ ॥५८४॥

तुम्ह हौ पूरा गुरू का सूरा । तुम्ह हो चतुर सुजानं ॥
अणचाषी ही छोड़ो लषमण । चाषी छोड़ी तौ जानं ॥ ६ ॥५८५॥ॐ

बालनाथ जी की कुछ अन्य रचनाएँ [२]ॐॐ

माया सो मम्ता मम्ता सो माया । कलपन्ते काया कठिन जोग पाया ।
खट रस मिठ रस सब रस भोगी । बिन गुरु ज्ञान फिरै मुढ जोगी ।
ज्ञान नाथ गड़वड़िया प्रांग नाथ रोगी । सत नाथ नूं यूं कहा संतोष नाथ जोगी ।
अलख झोली खलक खजाना । भूख लगे तो माँग के खाना ।
आप दीया सो भी त्यागे मांगन मो जां । सत की भीक्षा विचार विचार के खां ।

हो हुंस्यार सरण सतगुर को दिल साबत फीर डरना क्या ।
जोग जुगत से करो जोगेश्वर चारुं कुंठ विचरना क्या ॥

ऊपर को भरै निचे को झरै । उस का गोरख क्या करै ।
द्रशनी योगी शिव की काया । कह नाथ जी योगेश्वर आया ।
सत की नगरी धर्न का राज । बाला जोगी करै आवाज ॥ ५८६ ॥

ॐ ख. प्रति से ।

ॐॐ काद्री मठाधीश आचार्य श्री राजा चमेलीनाथ जी महाराज की कृपा से प्राप्त ।

बाल गुंदाईं जी की सबदी (३)※

अवधू तुरक कै सूर ज्यूं हिन्द कै गाई। बहन कै माई त्यूं जोगी कै अब माई ॥
सति सति भाषंत बाल गुंदाई। ये तीन्यूं अमष रे भाई ॥ १ ॥

पहलै पहरै सबको जागै। दूजै पहरै भोगी ॥
तीजै पहरै तसकर जागै। चौथे पहरै जोगी ॥ २ ॥५८७॥

बाल गुंदाई जी की सबदी (४)※※

जास माता सीलवंती। पिता अस्त न भाषते ॥
तास पुत्र भऐ जोगेश्वर। पुनिरपि जन्म न बिंदते ॥ १ ॥
चहुँ दिस जोगी सदा मलंग। षेलै बर कामिनि कै संग ॥
हसै षेलै राषै भाव। राषै काया गढ का राव ॥ २ ॥
दस दरवांजा राषै बांण। भीतरी चौर न देई जांण ॥
ग्यांन कछोटा राषै कसि। पांचूं इन्द्री राषै बसि ॥ ३ ॥
पवन पियाला भषिबो करै। उनमनि ताली जुगे जुगि धरै ॥
रांम आगैं लछमण कहै। जोगी होइ स इस बिधि रहै ॥ ४ ॥
अवधू सो जो अनभै जांनै। उलटा बांण गगन कूं तांणें ॥
पलटी बाई बेधीया भूंरा। आत्मां जोगी बसि कीया जूंरा ॥ ५ ॥
पारधी चढीया षोज जु पाया। बोलै बाल गुंदाइ ॥
परचै डोरी गुरुमुष जांणी। सुसैंसी हरहाई ॥ ६ ॥
कलिजुग मांही सतजुग थाप्या। उलटी जोत्ति चढाई ॥
भेद बिरूणां भिष्ट होइगा। सत्ति सत्ति भाषै बालगुदाई ॥ ७ ॥
बूटी सुरति सब बोदी होसी। बालक अहोसी अलपाई ॥
कलि के तूटे परलै जासी। कदे न मिलिसी भाई ॥ ८ ॥

※ केवल ख. प्रति में ही प्राप्त है।

※※ ग. प्रति से। ख. प्रति में प्राप्त बालनाथ जी की सबदी के ६ पद इसमें क्रमशः २, ३, ४, १०, १२, १३ संख्यक पदों से कुछ पाठभेद के साथ मिल जाते हैं।

तुरक कै सूर ही हकै गाई । माता कै पूत वहन कै भाई ॥
जगें जोगी कै सबे माई । सति सति भाषंत श्रीबालगुदाई [1] ॥ ९ ॥
अलप बुँद काया उतपनी । बहुत बिंद तैं षोया ॥
गऐ बिंद की षबरिन पाई । मूऐ बिंद कूं रोया ॥ १० ॥
पहली की एक लड़का लड़की । पीछे जोग मैं पैठा ॥
तूटै चमड़ै भसम लगाई । बाल जती होइ बैठा ॥ ११ ॥
तुम हो पूरा गुर का सूरा । तुम हौ चतुर सुजांणां ॥
अठाचाषी ही त्यागी लषमण । चाषि रहै तौ जांणां ॥ १२ ॥
यन मन राइ जगत्त बिनषै लै । उंदरि मारि लै बिलाई ॥
बिमलौ बिचारौ हो जोगि हो । सिव घर सक्ति समाई ॥ १३ ॥
गोरषनाथ गुर सिष बालगुदाई । पूछंत कहिबा सोई ॥
उनमनि ताली जोत्ति जगाई । सिधां घरि दीपग होई ॥ १४ ॥
बैसिबा पदम आसनं । अष्ठोचर देषा दस बैंठारे ॥
सवा घडो रक्त सोषिवा । ऐ ग्यांन साधै हो अवधू बालगुदाई ॥
तब रहबा पवन भखिबा बाई ॥ १५ ॥
पद पणं वे पद हरि अवधू । पद ले पिंड डा वांणी ॥
आकार होइ निराकार देषौ । अैसी अनंत सिधां की वांणी ॥ १६ ॥
नांम अछै आकार बिरुंणां । सतिकृत्मम न लागा ॥
त्रिवधि बिंदनि लेग निरालंब । काल बिकाल दोइ भागा ॥ १७ ॥
बाहरि भीतरि प्रतषि देष्या । सिंध भेद हम लाधा ॥
ब्रह्मा बिस्न महेसुर देवा । तिनरूं गुर करि सीधा ॥ १८ ॥
सक्ति कुंडलनी त्रिभवन जननी । तास किरनि हम पावा ॥
आदि कंवारी जगत की नारी । ब्रह्मा बिस्न रूद जिन जाया ॥ १९ ॥
सुनंते हम बहरा भईला । देषै तैं जा चंधा ।
गोरषनाथ पाइ प्रसादे । अमर भेया हम कंधा ॥ २० ॥
आप की अस्थि तिन बोलषं । प्रंकी कहै कहांणी ॥
घर ही आछै जा चंधौ भोला । न जांणै रैं निबिहांणी ॥ २१ ॥
पंच मुष स्वाद ऐक मुष आंणै । न करह तात पराई ॥
ग्यांन बिनां बरतो नां पडई । ऐक अनेक मुष पाई ॥ २२ ॥

१–ख. प्रति के प्रथम पद से तुलनीय ।

अधिक तत्त ते गुरु बोला ऐ । सम तत गुर भाई ॥
हीन तत्त ते चेला ऐ । सत्ति सत्ति भाषै बाल (गु) दाई ॥२३॥५८८॥

१६—भरथरी जी का सपत संष ग्रंथ (१)

आदि संख का मूलंकार । अनली बाई ऊंकार ॥टेक॥
पहला संख निरंजन देव । पाया ब्रह्म ग्यान का भेव ॥
उलटि उजाई गगन कूं चढ़ै । अनभै रहतां पिंड न पड़ै ॥ १ ॥५८९॥
दूजा संष निरालंभ कथ्या न जांन । घरि सूरिज चंद कै आन ॥
चंद सूरिज एकै ले बहै । तौ इन उपदेसैं क्या रहै ॥ २ ॥५९०॥
तीजा संख विचारह पाया । षेचरी मुद्रा त्यागंत माया ॥
माया त्यागी राषौ काल । इन उपदेसैं बंचिये जम काल ॥ ३ ॥५९१॥
चौथा संष संतोष भणीजै । द्वादस अंगुल पवना पीजै ॥
पीजै पवना बाजै बंस । तौ न पड़ै काया न उड़ै हंस ॥ ४ ॥५९२॥
पंचमां संष बांधि लै बाई । षटचक्र बेधती आई ॥
पाया कंवल सहस्रदल सुष । तो जनम जनम का गया दुष ॥ ५ ॥५९३॥
छठा संष अकुलीन भणीजै । गुर परसादैं सिव सिव कीजै ॥
सिव सिव करि निरारंभ रहीजै । इन उपदेसैं जुगि जुगि जीजै ॥ ६ ॥५९४॥
सातमां संष कंद्रप होई । निद्रा तजी काल कौं जोई ॥
काल तजी सिव सकती समि रहै । सो जोगी पंचमू आतमां गहै ॥ ७ ॥५९५॥
सपत संख का जाणैं भेव । सोई होइ निरंजन देव ॥
सपत संख भणत भरथरी जोगी । थिर होई कंध काया होई निरोगी ॥८॥५९६॥*

राग रामंग्री (२)

नहीं आऊं कामंणी नहीं आऊं लो । नहीं आऊं राजभार लेबा तोर ॥टेक॥
एवां नैरांकां कौंन बसेषू । मारिबा नांयक जमागं ॥
हूं तोहि पूछूं मारहा पढ़िया रे पंडित । कांई मरिबा ना लो लागं ॥१॥५९७॥

---

* क प्रति से ।

मन पवन मार्‌हा हस्ती रे घोड़ा । गिनांन ते अषै भंडारं ।।
बर ले कांमणि षोलै बैठा । ताथैं षरा डराऊं ।।२।।५९८।।

बूढ़ा था सो बाला हूवा । इब मैं काइँ वाइँ जाणं जी ।।
सतगुरु सबदूं राजा भरथरी सीधा रे । गुरु गोरष बचन प्रवाणं जी ।।३।।५९९।।†

भरथरी जी की सबदी (३)

अहंकारे प्रिथमी षोणीं । पहुपे[1] षोणां भौरां[2] ।।
सति सति भाषंत राजा[3] भरथरी । जीव[4] का बैरी जौंरा[5] ।।१।।६००।।
सुषिया हसंति दुषिया रोवंत । क्रीला[6] करंतु वट कांमनीं ।।
सूरा जूझंत[7] भौंदू[8] भाजंत । सति सति भाषंत राजा भरथरी ।।२।।६०१।।
दुषी राजा दुषी परजा । दुषी ब्राह्मण बांणिया ।।
सुषी एक राजा भरथरी । जिनि गुर का सबद परवाणियाँ[9] ।।३।।६०२।।
चढ़ेंगे ते पडैंगे । न पडैंगे तत बिचारी ।।
धनवंत लोग छीजैंगे । तेरा क्या जाइगा भरथरी भिष्यारी ।।४।।६०३।।
जोगी[10] भरथरी भरमि न भूला । तलि करि डीबी ऊपरि करि चूल्हा ।।
दोइ[11] दोइ लकड़ी जुगति करि[12] बाली[13] ।
जोगी[14] भरथरी जीवै जुग चारी ।।५।।६०४।।
अवधू जल बिन कँवल कँवल बिन मधुकर । कोइल बोलै कंठ बिना ।।
थल बिन मृघ मृघ बिन पारध । एक सर वेधे पंच जना ।।६।।६०५।।
नउ[15] द्वार जड़ि ले कपाट । दसवैं[16] द्वारैं सिव घरि बाट ।।
एक[17] लष चंदा दोइ[18] लष मांण । वेधणा[19] मृघ गगन अस्थान ।।
वेध्या मृघ न छाड़ै पास । भणंत भरथरी गोरख का दास ।।७।।६०६।।

---

† ग प्रति से ।

१. ग, पहोपे; २. ग, भूंरा; ३. ग, राजा जोगी; ४. ग, पिंड; ५. ग, जूंरा; ६. ग, केला; ७. ख, झूझंत; ८. ख, भूद; ९. ग, पिचाणीयां; १०. ग, राजा; ११. ग, दै दै; १२. ग, सूं;—ग, जारि; १३. ग, राजा; १४. ख, नव । १५. ख, प्रति में बाइब णिजै चौसठि दृढ़; १६. ग, दोउ; १७. ग, ऐक; १८. ग, बेध्या; १९. 'ग' में 'तो' नहीं है;

तनि निरास मन मंडै माया । तौ[1] मूंड मुड़ानि भंडसि काया ॥
मन निरास संकल[2] रस भोगी । कहै भरथरी ते नर जोगी ॥८॥६०७॥

पंच पंडा अधिक बलिबंडा[3] । मनराइ मैमंता गाजै ॥
बिषम[4] लहरि कंद्रप की उठे हो सिघो[5] ।
तहां[6] कूंण कूकै कूंण भाजै ॥९॥६०८॥

बैरागी जोगी राग[7] न करणां । मन मनषा करि बंदी[8] ॥
अगम अगोचर सिव का बासा । तहां[9] आसा त्रिश्ना षंडी ॥१०॥६०९॥
मनसां यंडी त्रिश्ना[9] षंडी॰। मन पवन दोइ उजीरं ॥
सति सति भाषंति हो जोगी[10] भरथरी । तब मन हुवा[11] थीरं ॥११॥६१०॥

राज गया कूं राजा झूरै । बैद गया कूं रोगी ॥
कंत[12] गया कूं कांमणि झूरै । बिंद[13] गया कूं जोगी ॥१२॥६११॥
बीज नहीं अंकूर नहीं । नहीं[14] रूप रेष आकार नहीं ॥
उदै अस्त तहां कथ्या न जाइ । तहां भरथरी रह्या समाइ ॥१३॥६१२॥
मरणै का संसा नहीं । नहीं जीवन की आस ॥
सति भाषंति राजा भरथरी । हमारे[15] सहजै लील बिलास ॥१४॥६१३॥

निरगुन[16] कंथा बहु बिस्तार । कथो निरंजन रहो आकार ॥
पूछंत[17] विकंमदीत बावन वीरं । कौंण परचै रहिबा थीरं ॥१५॥६१४॥
सुणि हो बिक्रम ब्रह्म गियांन । देह बिबरजित धरो धियान ॥
उदै अस्त जहां कथ्या न जाइ । तहां भरथरी रह्या समाइ ॥१६॥६१५॥
आगै बहनीं पीछै भानु । सुरति निरंतरि वृछ तलि ध्यानु ॥
कथो[18] निरंजन रहो[19] उदास । अजहूं न छूटै[20] आसा पास ॥१७॥६१६॥
मायां[21] सत्रनी न करसि गरब्यं[22] । नहीं धन जोबन[23] जहां होइब्यं ॥
कनक कांमनी भोग बिलास । कहै भरथरी कंध विणास ॥१८॥६१७॥

---

१. ग, प्रम; २. ग, बल्यवंता; ३. ख, में 'विषै' और 'क' में 'करड़ी'; ४. ग, कद्रंप कीनिकसै; ५. ग, तब; ६. ख, बैराग; ७. ग, बंडी; ८. केवल ख में 'तहां' है; ९. ग, आसा; १०. ग, राजा; ११. क, कैसे, और ग—'गोइवा'। १२—ग. रूप; १३—ख. पूं बिंद; १४—यह पंक्ति केवल 'ख' में है; १५—ख. हमकूं नित हो भोग बिलास; १६—ग. निरघन; १७—यह पंक्ति केवल 'ख' में है; १८—ग. कथै; १९—ग. रहै; २०—ग. छाड़े; २१—ख. 'मयं सतरंणी नकरो गरबयं; २२—ग. ग्रब; २३—ख. जोबरा;

साधिबा एक पवन आरंभ साधिबा । छाड़िबा[1] तो सकल बिकारं ॥
रहिबा तौ निहिसबद को छाया । सेइबा[2] तो निरंजन निराकारं ॥१९॥६१८॥
कुलहीनं[3] नगनो बाला । मृगनैंन रूप दीसंत बिक्राला ॥
झलकंत पद्मं नाग सो वेनो । कतो आगतो सलज्या बिहूंनी ॥२०॥६१९॥
नगनसि काष्टं नग्नस्य रिषे[4] । नग्नस्य जीव जोव जल चरा ॥
अजहूं काचीस हो मूरषि[5] नरा । नहीं प्रसिधि जोगेस्वरा ॥२१॥६२०॥
धंनिसं पुत्री कुलवंती । धंनिस्य तूं पतिव्रता[6] ॥
धनिस्य तू देस देइ । अहं उपदेस मूरिष जोगी ॥२२॥६२१॥
रूषांत बाघा गुफांत नागा । अधर[7] सिला डगमगांत ॥
भरथरी मनि निहचल । घोरि घन बरसंत ॥२३॥६२२
त्तिण सज्या[8] बनोबासी । ऊपरि अंबर छाया ॥
भरथरी मन निहचल । घोरि घोरि बरषि होइ इके राया ॥२४॥६२३॥
जस्य माता[9] तस्य राता । जसि पीवता तसि मरदता[10] ॥
है है रे लोका दुराचारी । बैरागी ह्वै[11] किन जाइता[12] ॥२५॥६२४॥
जस्य माया तस्य जाया । तस्य स्यूं क्यूं रे विषै मुंचाते काया ॥
है है[13] रे लोका दुराचारो । निज तत तजि लोहीं चाम चित लाया ॥२६॥६२५॥
काम[14] कलाली चित चड़ी । सुरै[15] विषै सज्या मनमथ पास ॥
वीरज्यं[16] ब्रह्म हत्या । हैं है रे लोका दुराचारी ॥
कहां रही सुच्या ॥२७॥६२६॥

१, २–ख. में 'तौ' नहीं है; ३–ग. प्रति में यह पूरा पद इस प्रकार है :—
अलस्यहीनां नगनौ य बाला । मृग नैन रूपी दृष्टो बिकराला ॥
पदमो कलकंत वाकस्य बेणी । कुतौ यागत्या है लज्या विहूणी ॥
४–ग. रिषि; ५–'मूरषि' केवल ख. प्रति में है; ६–क. पतिभरता; ७–यह पंक्ति 'ग' में नहीं है; ८–ख. त्रिणंत सिज्या; ।
९–ग. ता तस्य; १०–ग. मृदंता; ११–ग. कै; १२–ग. जांवते; १३–ग. हा हा ।
१४–१५–ख. प्रति में क्रमशः इस प्रकार है :—
कामस्य कलाले चितस्य चिड़ा ।
सुरा विषै सिज्या मनमथ मास ॥
१६–ख. बीरजं;

अस्त्री जो निंदीयते व्यंद । कोटि पूजा बिनसते[1] ॥
जप[2] तप व्रत भजनं । ब्रह्महत्या पदे पदे ॥२८॥६२७॥

दरसने चित हरनी । परसने बुधि ॥
संजोगे बल हरनी । कहै भरथरी ध्रिग ध्रिग नारी राकसनी[3] ॥२९॥६२८॥

कुंचील[4] कंथा कुंचील पंथा । कुचील घरि घरि भोजनं ॥
कुचील दाता दया हीणं । कौंण जानंत[5] पर बेदनं ॥३०॥६२९॥

गोरष बोलै सिरि षड़ा[6] । दुवटा ह्वैहै पंथ ॥
एक दिसा[7] कूं बांघणी । एक दिसा कू नंथ ॥३१॥६३०॥

चमड़ी दमड़ी ममड़ी । तीनि बस्तु त्यागी ॥
सति सति भांषत जोगी भरथरी । ते नाइं रता[8] बिरागी[9] ॥३२॥६३१॥

नारी चोरी जारी । तीनि बस्त बिबरजित[10] त्यागी ॥
सति सति भाषंत जोगी[11] भरथरी । ते नाइ रता बैरागी ॥३३॥६३२॥

मोहन बंधिबा मन प्रमोधिबा । भिष्या ते ज्ञान बिचारं ॥
पंच[12] स्या बाति करि एक स्यूं राषिबा । तौ यौं[13] उतरिबा पारं ॥३४॥६३३॥

पहुप द्रिष्टं पलासं च । मूरष बदंत पाडलं ॥
बादं बिबादं न कुरुते नाथं । पालसं तथापि पारुलं ॥३५॥६३४॥

मारी भूषर साधी निंद । सुपिनैं जाता राषी बिंद ॥
जुरा मरण नहीं व्यापै रोग । कहै भरथरी धनि धनि जोग ॥३६॥६३५॥

नादा बिंद बजाइलै दाऊ । पूरिलै अनहद बाजा ॥
एकांतिका बासा सोधिले भरथरी । कहै गोरष मछिन्द्र का दास ॥३७॥६३६॥

१—ख. बिनस्तते, क. विसतते; २—पाठान्तर ग-प्रतिः—

बरत भजन तप षंडन ज्ञान हीन तपो नास्ति ।

३—यह पूरा पद केवल 'ख' प्रति में है ।

४—यह क. का अंतिमपद है; ५—क. बूझंत; ६—ग. षरी; ७—ग. दसा । ८—ख. राजा; ९—ग. वैरागो; १०—केवल ख में 'बिबरजित' है; ११—ग. राजा; १२—ग. प्रति-पंच सूं बात करबा ऐक सूं रहबा; १३—ग. ते ।

अथ भ्रथ्री जी का श्लोक (४)

मंत्री उवाच—

अहो ग्यांनी महा मूंनी । अष्ट अंग भस्म तन लेप्नं ॥
किम अरथ कंठ माला । कूंण ध्यान हो तपेस्वरी ॥१॥६३७॥

भरथरी उवाच—

गंगा उपरि कंठ हेमग्री सिला । जहां बैठं पदम आस्नं ॥
उचरंते ब्रह्म ज्ञानं । सोबंते जोग निंद्रा ॥
मनो माला न जाणो रे राजेस्वरं ॥२॥६३८॥

सरीर सूं कोटि क्रमंणां । ब्रह्म करम न लीयत्ते ॥
जत्र उचरंत नाम । तत्र काल परवरत्तते ॥३॥६३९॥

संसारे क्रम बंधनं । क्रम संसार न लियत्ते ॥
ब्रह्मा बिसन म्हेस्वरं । तेऊ क्रम बिटंमते ॥४॥६४०॥

कंटको पदम नालं । उदिक जल पीवनं ॥
सुकल केस पासं मजनं । जन विजोग पिंडता ॥
को नृधनी । नृपषि विधातां ॥
तस्मई बिध वसेषा । न टलंत भांवनी क्रम रेखा ॥५॥६४१॥

मंत्री उवाच—

हस्ते पदमं पगे पदमं । मुष बतीसी त्तसं नृ मलं ॥
राज हंस सुध बासकं । ममो जाणांत जोगेस्वरं ॥६॥६४२॥

भरथरी उवाच—

जा दिन उतपति व्यंद । माता ग्रभेषु नोयते ॥
ता दिन लिषंते विधाता । हांणि वृधि दुष सुषं ॥
तस्मई विध्य वसेषा । न टलंत भावनी क्रम रेखा ॥७॥६४३॥

लिषंते बिधन लिलाटे पटले । हांणि वृधि दुष सुषं ॥
तस्मई बिध वसेषा । न टलंत भवनी क्रम रेखा ॥८॥६४४॥

मंत्री उवाच—

षीन देह षीन नेत्रं । छिमा दया तस नृभय ॥
ग्यांन संपूर्ण बिद्या सेवनं । ममो जांणंते जोगेस्वरं ॥ ९ ॥ ६४५ ॥

बीर ब्यक्रमादीत उवाच—

षीन देह महा पापी । कालो भषिक नृभयं ॥
तस रष्या न करत ब्यंद । तस कर कंध षेदनं ॥ १० ॥ ६४६ ॥

मंत्री उवाच—

हे हे जोगेस्वरं तापेस्वरं । पूरब जनमषु लिप्त येते ॥
भजै क्यूं न राम नांमं । ज्यूं भो भो का पाप दुरंगता ॥ ११ ॥ ६४७ ॥

गिर वैरे गै वरे गता । जो जो जोबन गता ॥
सरपे पीवंत पवनां । ग्रहने भवंत बनां ॥
षपत कालं नहि चलं मनां । असमय भाव राजेस्वरं ॥ १२ ॥ ६४८ ॥

भरथरी उवाच—

ब्रह्मा जेन कुलाल लालं । अंति ब्रह्मण्ड तेउ भवते ॥
बिसन जेन दस ओतारं । महा संकट ग्रभ बासं ॥ १३ ॥ ६४९ ॥
रूद्रौ जेन कपाल पांनी । बुधि भिष्यटण कारते ग्रह ग्रहं ॥
तस्मई विधि वशेषा । न टलंत भांवनी क्रम रेषा ॥ १४ ॥ ६५० ॥

हे हे कुरी कंपटी तूं दीस जोगी । ईस उपर जोवत बटी ॥
मंडांन काली प्रवरत गवनी । अह निस कहणी ॥
निस भोगी वणी ॥ १५ ॥ ६५१ ॥

मंत्री उवाच—

अहो तूं राजा छत्रपती । बिधातो न चतुरदसी ॥
विक्रम मूरो न तोयं । ऐन भवंते तसकरा ॥ १६ ॥ ६५२ ॥

राजा उवाच—

अहो तू बड़ो जोगी । अरु वौ महामुनी ॥
कर न भवते तसकरा प्रतछि कंठ माला ।
देषत सकल प्रथमी ॥ १७ ॥ ६५३ ॥

मंत्री उवाच—

षीन देही षीन दसा तपेस्वरी । षिमां दया तस नृ भयं ॥
महा बित्र ब्रह्म ग्यांनी । ऐ न भवंते तसकरा ॥ १८ ॥ ६५४ ॥

राजा उवाच—

षीन देह सो तो पाप भवेत । कालो भये नृभयं ॥
तिस कारणि ष्यौ जायंत । कंथत सरवस बालिकं ॥ १९ ॥ ६५५ ॥

अथरी उवाच—

रांम जेन बिटवते । पांडु जेन मबली बनोगता ।।
चंद सूर कलंक चटांता । त्स्मई विधिवसेषा ।।
न टलंत गांवनी क्रम रेषा ।। २० ।। ६५६ ।।
ऊलो बिलो गना जबि बासरय । किम सो दोषणं ।।
त्रा त्रिग बहोप्पा संध न बरसत सो किम दोषणं ।
त्स्मई बिघवसेषा न टलंत भांवनी क्रम रेषा ।। २१ ।। ६५७ ।।
उदित भांण पछिम धृग दसा ।
बिदासुंत कंवल प्रबल सिला प्रमुल महेमा जलं ।।
बेणी जाई ते सीतलं । त्स्मई बिधिवसेषा ।।
न टलंत भांवनी क्रम रेषा ।। २२ ।। ६५८ ।।

बीर विक्रमादीत उवाच—

नृगुण कंथा बहो बिसतारं । कहो निरंजन बहो अकारं ।।
कंथत ब्यक्रम वांवन बीरं । कूंण प्रचै थिर रह्यौ सरीरं ।। २३ ।। ६५९ ।।

अथरी उवाच—

अंकुर बीरज नहो आकार । रूप न रेष न वो ऊंकार ।।
उदै न अस्त आवै नही जाई । तहां अथरी रह्या समाई ।। २४ ।। ६६० ।।
किम तांरा चंद्र रवि भूति समि । किम गंगा कूंप उदिक जलं ।।
गज क्रुरंग किसतूरी स्वांन निघ । कहा मूरिष कहां पंडिता ।।
साघू चोर न जानांमि । तजंत देस दुरंगता ।। २५ ।। ६६१ ।।
तजीऐ देस दया हीणं । तजीऐ दुरमुष भारज्या ।।
तजीऐ गुरू ग्यांन हीणं । तजीऐ असनेही बंधवा ।। २६ ।। ६६२ ।।
सह रह्यौ सधू सरांग्य । गलत जोबन कांमणी ।।
मन मनष्या सैहंत्रीत । तन धन या राग उतिण बिनां ।।
सरवर जल बिना रोत्ता दोवेवा हो राजिइ ।। २७ ।। ६६३ ।।

प्रधांन उवाच—

किम रथ बिना रथ हो देव ।

अथरी उवाच—

गृह कूपं महा दुषं । रधर बोहूत्र सटते माया ।।
सम तारो दीप गनत न जलंते ।। २८ ।। ६६४ ।।

भूसा रोरा सांगिणंता । तबसि त्रटा सुरजादि देव ॥
ग्रहण कते लगभोबसु । प्रभवंति दिन मेकं सिता ॥
क्रम सबली को समरथा ॥ २९ ॥ ६६५ ॥

कुल सिहीणी नगनो पै वाला । मृग नैंन रूपी दृष्टौ बिक्राला ॥
पदम कलकंत नागन सी वेणी । कतो या गत्या हे लज्या बहूँणी[1] ॥
॥ ३० ॥ ६६६ ॥

नगनंस्य काष्टं नगनसि रिष । नगनसि जीव जलचरा ॥
अजहूं क बिसरो हो नरा । नहि प्रसिध जोगेसुरा[2] ॥३१॥६६७॥

नही जोग जोगी सरब रस भोगी ।
गुर ग्यांन हीणां फिरो मूढ जोगी ॥
जोगी चिंता विकलपो ममता समाया ।
कथं जोग जुगता तैं जोगो न पाया ॥३२॥६६८॥

धनसि पुत्री कुलवंती नारी । धनसि तू पतिबरता ॥
धनसि देससि देवी । अहं उपदेस मुरष जोगी[3] ।३३॥६६९॥

राजा उवाच—

हे हे सिध प्रसिधी दोइ कुल सुधी । कांम चरंती मोह तजंती ॥
देह क्रसुधी देह न सुधी । ममो पाटि·············रांणी ॥
धनि धन्य हे राजकन्या तोहि ॥३४॥६७०॥

अक्रोध बैराग जत्र निआंणी । षिमा दया जन प्रियसु ॥
नृलोभ दाता मैसो कर हता । ग्यांन प्रमोधे दस लषण आंणी ॥३५॥६७१॥

मद भारथ केसरि कस्तूरी । राजा वेस्या तपेश्री ॥
इतना कुल न पोजंत हो राजा । जाहर नई गगा जलो जथा ॥३६॥६७२॥

अस तजि गज तजे राज तजि । तजि सषीमन को साथ ।
धृग मन घोषै ला तेलै कै । धर्यो पीपै परि हाथ ॥३७॥६७३॥

कूवा जग का जीवणां । बढ़ै सदा वा रोगी ॥
तातैं निकस्या भरथरी । मीठा लागा जोगी ॥३८॥६७४॥

---

१. तुलनीय, पद ६१९; २. तुल० पद ६२०;
३. तुल० पद ६२१;

जिषां न विद्या न तपो न दानं । न चापि सीलं न गुणो न धर्मो ॥
ते मृत्य लोके भू भार भूवती । मानेष रूपेण मृघा चिरंती ॥३६॥६७५॥

॥ इति श्री भरथरी जी श्लोक संपूर्ण ॥❀

भरथरी जी का पद (५)

सिधौ इहां कोई दूजा नांही । ग्यांन दिष्टि करि देषण लागा ॥
हरि है सब घट मांही ॥ टेक ॥

जल थल मांही जीव जंत है । इन परि दया बिचारो ॥
सब घट व्यापक एक ब्रह्म है । काहू कूं जिन मारो ॥१॥६७६॥
जहां था दोष दया तहां उपजी । सहज सुरति अनुरागी ॥
गोरष मिल्या भरम सब भागा । सुरति सबद सू लागी ॥२॥६७७॥
मारि न षाइ भषै नही मृतक । सुरापान नही पीवै ॥
तंत मंत ठुनका नहिं जानें । सो वैरागी जीवै ॥ ३ ॥ ६७८ ॥
गुर सूं ग्यांन ग्यांन सूं बुध भई । बुधि सूं अकल प्रकासी ॥
भनंत भरथरी हरि पद परस्या । सहज भया अविनासी ॥ ४ ॥ ६७९ ॥

२०—मछन्द्रनाथ जी का पद[1]

राग काल्यंगड़ौ

मुषड़ली लागी थारा नावनी । म्हानै भावै भावै भगवंत जी रो नांवे म्हांरा बाल्हा रे ॥ टेक ॥

जाण जैसी रंग भेटीये । काई भजन भलो भगवंते म्हांरा बाल्हा रे ॥ १ ॥

❀ क. प्रति से ।

१. श्री डा० सोमनाथ जी गुप्त ने जसवन्त कालेज जोधपुर से १३-२-५१ को भेजा । यह पद जिस पुस्तक से लिया गया है वह जोधपुर की दरबार लाइब्रेरी में हैं । गुप्त जी ने लिखा है कि "और भी दो एक अन्य हस्तलिखित संग्रहों में इसी प्रकार मिले हैं ।"

सबही तीरथ मैं बसैतो । काई मंजन करै जन कोई म्हारा बाल्हा रे ॥ २ ॥
त्रीमल थाते न्हाई चल्या । काइ एहड़ो पटंतर जोई म्हारा बाल्हा रे ॥ ३ ॥
काया तीरथ मै ग्यांन बड़ा । काई साधानौ दरसण होइ म्हारा बाल्हा ॥ ४ ॥
भणै रे मछन्द्र ऐहड़ो पटतर । काइ भगवत सवान कोइ म्हारा बाल्हा रे ॥ ५ ॥
॥ ६८० ॥

राग धनासी

पंषेरु उडि सी । आय लीयौ बोसरांम ॥
ज्यों ज्यों नर स्वारथ करैं कोइ न सवाऱ्यो कांम ॥ टेक ॥
जल कुं चाहै माछली । थण कु चाहै मोर ॥
सेवग चाहै राम कूं । ज्यौ च्यंवत चंद चकोर ॥ १ ॥
यो मारथ को जोवड़ी । स्वारथ छाड़ि न जाय ॥
जब गोप कीरया करी । म्हारो मनवो समग्यौ आय ॥ २ ॥
जोगी सोइ जांणी रै । जगतै रहै उदास ।
तत नोरंजण पाइया । यों कहै मछंदर नाथ ॥ ३ ॥ ६८१ ॥

---

२१ — महादेव जी की सबदी*

गगन मन छाकि[1] लै । त्रिबिध दुष काटि लै ॥
थाकि लै बल[2] पंच भूतं । हरि रस पागि लै[3] ॥
जनम भै भागि लै । भाषंति सति सिव अवधूतं ॥ १ ॥ ६८२ ॥
सिव संति गुरू कृपा ये माणिक लामि लै । रोकि लै बहतरि थांनं ॥
साधि लै उद्यांन घाटी । जोग जुगति करि षट चक्र छेदि लै ॥
भेटि लै ब्रह्म कपाटी ॥ २ ॥ ३८३ ॥

---

* इस सबदी के सिर्फ ९ पद्य क प्रति में हैं।
शेष पद ख और ग प्रतियों में हैं।

१—ग. बाकि; २—ग. बाला; ३—ग. पाकिलै;

हाजरा कूं हजूरि । गाफिला कूं दूरि ।।
बिरला जाणंत[1] निज तत ज्ञानी । मुसक नाभी बसै[2] ।।
मृगा[3] षबरि ना लहै । भाषंत सिव सति बाणी ।।३।।६८४।।

अरध उरध सों पुष्ट[4] करीजै । संषड़ी नाली बाई भरीजै ।।
माठी हेठैं करू तन जाई[5] । भणैं[6] सदा सिव जीवण उपाई ।।४।।६८५।।

जिह्वा[7] इंद्री येकै[8] नाल । जे राषै[9] ते[10] बंचै काल ।।
बोलंत ईस्वर सति सरुप । तत विचारै तौ रेष न रूप ।।५।।६८६।।

अजपा जपै सुंनि मन धरै । पांचूं इंद्री निग्रह करै ।।
ब्रह्म अगिन मै होमैं काया । तास महादेव बंदै पाया ।।६।।६८७।।

बेद हीन ब्रह्मा करम चंडाल[11] । अज्ञानी[12] जोगी प्रथी[13] का भार ।।
अबोध राजा की न कीजै सेव । सति सति भाषंत श्री महादेव ।।७।।६८८।।

सिव निरमाइल[14] ब्रह्म रस । चंडी धन जे षाई ।।
इस्वर बोलं पारबती । तीनौं समुला[15] जाई ।।८।।६८९।।

षारा षाटा षटरस । मीठै बाढंत रोग ।।
ईसुर बोलत पारबती । येता थी निरालंभ जोग ।।९।।६९०।।

धरम अस्थान बहू जात करम । छाड़ौ अवधू चित भरम ।।
चीया चेतनी मनि हित करि वाणी[16]। संकर बोलत संजम बाणि[17]।।१०।।६९१।।

आसण दिढ़ करि बैस जांणि । जाग्रिय निंद्रा थिति परवाणि ।।
अहार ब्यौर जुगति कर जाणि । संकर बोलं संजम बांणि ।।११।।६९२।।

चंद्र मंडल मधे सूरीयो[18] संचारि । काल बिकाल आवता निवारि ।।
उनमनि[19] रहिबा धरिबा धयान । संकर बोलंति सहज[20] बांणि ।।१२।।६९३।।

डाल[21] न मूल पत्र न छाया । स्वर्ग[22] मृत्यु[23] पाताल एक ही काया ।।
प्यंड[24] ब्रह्मांड एक[25] करि जाणी । संकर बोलंत अतीत बाणी ।।१३।।६९४।।

१-ख. नंत; २-ग. बहै; ३-ख. मृधा; ४-ग. तैं पृष्टि; ५-ग. कूँ कू उपाई; ६-ग. भनंत । ७-ग. जिभ्या; ८-ग. ऐको; ९-ग. जो रषै; १०-ग. सो; ११-ग. चडारं; १२-ख. अज्ञान; १३-ख. पृथमी; १४-ख. नृमाइल; १५-ख. नृमुला;
१६-ग. जाणी, १७-ग. वाणी । १८-ग. पवन;
१९-ग. जागृत निंद्रा यित प्रवांणा, २०-ख. सुपया, २१-ख. डाल मूलं पत्र न छाया, २२-ग. सुरग, २३-ग. मृत; २४-ग. पिंड; २५-ग. सोसम;

इन्द्री का जती मुष का सती । हिरदा का कंमल मुक्ता ॥
ईस्वर बोलंतं[1] पारबती । ते जोगी छोग[2] जुक्ता ॥१४॥६६५॥
देता ही जो सत करै । लेता करै संतोष ॥[3]
ईस्वर भाषंत पारबती । ये दून्यूं पावै भीष ॥१४॥६६६॥
*च्यारि वांणी का च्यारि भेद । रुक जुज स्यांम अथरवन वेद ॥
जुगति जोग करि जोगी तपै । संक्र अह निसि अजपा जपै ॥१६॥६६७॥
घुत षांड गीहूँ इंम्रत भोग । तहां सिर जालै चौष्टि रोग ॥
नभ तलि अगनि प्रजलै न ऊगै भान । ताते संसार का नरन प्रवान ॥१७॥६६८॥
जल अर्मल भरा लै नल । संसार सूं क्यूं न रहै रो कल ॥
मन मस्त हस्जी जाति बादल । भनंत सिव तब यहौं ता अस्थल ॥१८॥६६९॥
नव नाड़ी सो भरि ले मली । अगनि न बलै नाभी की तली ॥
चंद न सोषै सूर न करै । गिर ही पहली अवधू मरै ॥१९॥७००॥
मन में नीचा मधिम करम । मुष बषानैं उत्तम धरम ॥
भनंत इस्वर कलियुग की गति । तातैं न कही रो सति असति ॥२०॥७०१॥
पहुप दृष्टतु पलासं । मूरिखो बदंत पालं ॥
बाद बिबाद न करतबां । पाडलंत तथा पाडलं ॥२१॥७०२॥

२२---मीड़की पाव जी की सबदी

प्यंड[4] चलंता सब[5] देषै । प्रांण चलंता बिरला[6] ॥
प्रांण चलंता जे नर देषै । तास गुरु मैं चेला ॥१॥७०३॥
कहां बसै गुरु कहां बसै चेला । कूंण[7] षेत्र कहां[8] मेला ॥
अैसा ज्ञान कथो रे भाई । गुरु सिष की कूंण[9] लषाई ॥२॥७०४॥

१–ग. बोलैत; २–ख. जोग न जुक्ता;
३–यह पद केवल ग प्रति में है ।
* १६–२१ संख्यक पद्य केवल ग प्रति में हैं ।
४–ग. पिंड, ५–'क' में 'को' अधिक, ६–ग. अकेला,
७–ख. कौण, ८–ग. कैंसे, ९–ख; कौणंड,

अरधै बसै गुरु मधि[1] बसै चेला । तृकुटी षेत्र उलटि तहां[2] मेला ॥
अनहद सबद भईउ लषाई । गुर मुषि जोति निरंजन पाई ॥३॥७०५॥

काया कंचन मन कस्तूरी । सो ले गुरू कूं दीजै ॥
अषंड मंडल[3] मढ़ी छाइवा । जुरा मरण नहिं छीजै ॥४॥७०६॥

❀सिधा गड़बड़ छाड़ि दे । अनहद प्याला केल ॥
बूंद समानी समंद मैं । सो बुंद ले षेल ।५॥७०७॥

पीर भंडारै परषिये मन मेलू रंमता । जती सती का पटंतरा ॥
लाभै थिर रहंता ॥६॥७०८॥

राति गई अधराति[4] गई । बालिक एक पुकारै ॥
है कोई नग्र[5] मैं सूरि वां । बालक का दुष निवारै ॥ ७ ॥७०९॥

२३—रामचंद्र जी की सबदी

अगनि कुंड समो नारी । धृत कुंड समो नरा ।
जंघ जोडि प्रसंगांनां । क्यूं तौ मन निहचल रे लषमणां❀❀ ॥ १ ॥७१०॥

२४—लषमण के पद

मेरै मनि आया बहुरि अंदेसा । सो मैं सेया सबद बसेषा ॥ टेक ॥
इहां कछु और उहां कछु और । कूंण मुषि निरबाहो ।
बूझि कहत है लषमण बाला । गुझि महाराजि बतावो ॥ १ ॥७११॥

१—ग. मधे, २—ख. केवल 'उलटी', ३—ग. सुनि मंडल मैं,
❀ यह पद केवल ख. प्रति में है ।
❀❀ 'ग' प्रति से ।
४. ख, अँधिरात; ५. ग, नग्री ।

अधिक पाठ ग. प्रति

ग्यांनी सो जो ग्यांन मुष रहई । मेटि पंच का आसा ।
उर अंतर उनमनी लगावै । अगम गवन करे बासा ।

इहां उहां ऐक करि जांणो । आपा मंझै प्यछांणौं ।
जो तुम बाला बूझ करत हो । तो सबद मुषि निरताणौं ॥ २ ॥७१२॥

कैसा सबद कहो महाराजा । बाई सबद हो तेरा ।
इंद्रया वोऊं आदि लूं माया । तीनौं लोक अंधारा ॥ ३ ॥७१३॥

जो पिंडे सो ब्रह्मंडे । करद सबद चित लावो ।
षिड़की षोलि दवा दस उपरि । संधे तत मिलावो ॥ ४ ॥७१४॥

इला पिंगुला सुषनमां । ऐ काया की लार ।
कहे रुवनाथ रचीलयो वाला । रज वीरज की धार ॥ ५ ॥७१५॥*

— ——

२५—लालजी का पद

हूं बलिहारी सुगुणां जोगीया रे लाल । म्हारी काया नग्र को राव ॥ टेक ॥

मूल महल षिड़की लगि रे लाल । गगन गरजि जाई ।
सुनि सिषर रा तषत पर रे लाल । म्यारो जुगियो रह्यो रे लुमाई ॥ १ ॥७१६॥

बिन बादल बीज अनंत रे लाल । सिव सक्ती मेला मया रे लाल ।
जहां नित्ति नवला नेह ॥ २ ॥७१७॥

अरध उधर माठो चिगै रे लाल । जहां घर न लगाई धार ।
पंच सषी प्याला देवै रे लाल । जहां सहज मडो मत्तिवार ॥ ३ ॥७१८॥

इला पिंगुला संगर मैं रे लाल । सुषमनि नैबति घोर ।
मतिवाला घूंमत रहै रे लाल । जाकी लगी अलष सूं डोर ॥ ४ ॥७१९॥

गया दिवानैं देसड़ै रे लाल । रह्या दिवानां होइ ।
आपण पौनहो जाणीयो रे लाल जहां दिल की दुरमति धोइ ॥ ५ ॥७२०॥

सुंदरि सुषमनि जोगीयो भोगवै रे लाल । जाकूं सुनि सिषर को चाव ।
बिकट पंथ वैडा मता रे लाल । मेरे सत गुर दीया बताइ ॥ ६ ॥७२१॥

जोग जुगति सूं षेलणं रे लाल । सिषरां तंबू तणांइ ।
ठीक लगाई ठीकरै रे लाल । उलटि त्रिबेणी न्हाइ ॥ ७ ॥७२२॥

---

* 'ग' प्रति से ।

बिद्या वेद पावै नहीं रे लाल । कथै न कतेब कुरांणां ।
ठीकर तौ ठावौ कीयौ रे लाल । पावैं कोई संत सुजान ।। ८ ।।७२३।।

———

२६—सतवंती के पद

गहीयौ बाला सति सबद सुष धारा । गगन मंडल चढ़ि प्रीतम प्रसौ ।
रूप बरन तें न्यारा।। टेक ।। धरता कूं करता मति मानौ ।
सति को सबद चितांऊं । अब लग मरम लह्यौ नहीं मेरौ ।
गुज्झ बीज कहि जांउं ।। १ ।।७२४।।

हम भी माया तुम भी माया । माया रावन राघौ ।
जे तु बाला बूझ करत हौ । तौ सुसंवेद सूं लागौ ।। २ ।।७२५।।

सुसमवेद का भेद निराला च्यारूं बेद बिकारा ।
जिन अक्षर सूं साइर पाटा । सो सबकां करतारा ।। ३ ।.७२६।।

तीन लोक अर भवन चत्रदस । रच्या काल का चारा ।
साध सवद ह्लदै धरे लीज्यौ । ऐती नौंबट पारा ।। ४ ।।७२७।।

अवनि धसंती यूं सति भाषौं । राषौं तोष तुम्हारा ।
सुष सागर मैं सहजि मिलौगे । सति प्रनांम हमारा ।। ५ ।।७२८।।

किती ऐक बेर भया ऐ त्रिहनां । कोई जन जानैं या गहर गती ।
इंछा वोऊ आदि लूं माया । यूं सति भाषै सतवंती ।। ६ ।।७२९।।

———

२७—सुकुल हंसजी की सबदी

देवल देषंता पंडिता देवल षड़हड़िसी । राजा देषंतां रिणवासं ।।
गुरू चेला प्रतषि बाद होसी । पुत्र न मानिसी माइ बापं ।। १ ।।७३०।।

दिषण षड़हड़सी गगन गरजसी । पूटसी गंग जमन का नीरं ।।
बारा बारा जोजन उपरि नमी बससी । आंवला प्रवांन भिष्या होसी ।।
जती सती कोइ बिरला सथीरं ।। २ ।।७३१।।

जब मही आवटसी कूरम टलसी । पूटसी राजा नृपति के बीजं ॥
चंद सूर दोउ राह ग्रससी । तत्र पूता भणीबा रात्री न दिवसं ॥ ३ ॥७३२॥
उतिर दिसाथैं अहूठी कोठि दल मल मिलि चालिसी । अरु राजा का अनंत पारं ॥
राजा इंद्र बिसूक का आसण थरहरसी । सिध बुधि करिसी बिचारं ॥ ४ ॥७३३॥
बिमल बिचारि गिर कंदलि पैंसिबा । सुकल हंस भाषंत ते डंसं ॥
कीया चेतन दोइ सम करि मेलिबा । उड़ी न जाइसी प्रमहंसं ॥ ५ ॥७३४॥

———

२८—हणवंत जी का पद (१)

(राग—रावंगरी)

तत अैसा लो तत अैसा लो । किम करि कथं गंभीरं ॥
निराकार आकार बिबरजित । सति भाषै हणवंत वीरं ॥ टेक ॥
द्रिष्टि न मुष्टि न अगम अगोचर । पुस्तकि लिष्या न जाई ॥
जिहि पहचांना सोई जांनै । कहतां को न पत्याई ॥
बाहरि कहूँ तो सतगुर लाजै । भीतरि कहूँ तो झूठा ॥
बाहरि भीतरि अत्र निरंतरि । सतगुर सबहूँ दीठा ॥
मीन चलै चलि मधि न जीवै । नाद रूप बस कैसा ॥
पहुप वासनां कछू न दरसै । परम तत है ऐसा ॥ १ ॥७३५॥
आकासां उड़ि चढ़ै विहंगंम । पीछै षोजन दरसै ॥
बाल जती हणवंत यूं प्रणवैं । कोई विरला हरि पद परसै ॥
तत बेली लो तत बेली लो । अलष बिरष बिलंबैली ॥
बाड़ी विरह बीज निज बाह्या । मगतहिं जाइ रहैली ॥ टेक ॥
अंमी कुंड सौं धोए बांध्या । अमरा फूल भरेलो ॥
चेतनि पांण ति प्यांउंन लागा । अंबर छेकि बधैली ॥
पेड दिसा थैं पावक पोषै । सैलो अमी पीवैली ॥
रूप रेष,ताकै कछु नांहीं । बप विन मृग चरैली ॥
जिनिही कमाई तिगिही पाई । सहजैं फूलि रहैली ॥
बदंत हणवंत बाला रे अवधू । एक अमर फल देली ॥ २ ॥७३६॥

———

राग आसावरी

बाघणि लो बट पाड़ी लो । हेत करै घट भीतरि पैसे ॥
सोषिले बैन बनाड़ी लो ॥ टेक ॥
जे जन जांनि रहैं रहता सौं । मैं तिनके बन्दी पाया लो ॥
कामणि मीनी जिनि जिनि त्यागी । तिनके अषिल सरीरा लो ॥
सतगुर सबहूँ जे जन चालैं । तिनकूँ प्रणवैं हणवंत बीरा लो ॥ ३ ॥७३७॥*

हणवंत जी की सबदी (२)

बकता आगैं सुरता होइबा । धीग देषि मसकीनं ॥
सिध कै आगैं साधक होइबा । यौ सति सति भाषंत हणवंत बीरं ॥ १ ॥७३८॥
बेद पढ़े पढ़ि ब्रह्मा[1] मूवा । पढ़ि गुणि भाटन गारो ॥
राज करंता राजा मूवा रूप देषि देषि नारी ॥ २ ॥७३९॥
कथता तो कथि[2] गया । सुरता सुणि गया[3] ॥
नृमल रहि गया[4] थीरं । कोई येक बीर बिचषण पारि उतरैगा ॥
यूं सति सति भाषंत[5] श्री हणवंत बीरं ॥ ३ ॥७४०॥
चंचंल था ते निहचल हूवा । गुर के[6] सबदां थीरं ॥
परम[7] जोति आकासि बसाई । यूं सति सति भाषंत श्री हणवंत बीरं ॥४॥७४१॥
मगरधज बूझै[8] हो बाबा हणवंत बीरं । काया का कौण बिचारं ॥
अठसठि[9] तीरथ घट ही भीतरि । बाहर लोकाचारं ॥ ५ ॥७४२॥
चलै मीन जल षोज[10] न दीसै । गगन विहंगम रहिया[11] ॥
सिध का मारग कोई साधू[12] जाणैं । और सब दरसणी बहिया ॥ ६ ॥७४३॥
करतूती करतार है बिचि ही[13] । बिण करतूति पहूँचा ॥
बिधनां रची बिधै है जेती[14] । गुर बाइक के अवधूता ॥ ७ ॥७४४॥

---

* केवल क. प्रति में प्राप्त ।

१– ग. पंडित; २–ख. कथे; ३–ख. रह्या; ४–ग. रहैगा; ५–ग. भाषै; ६–ग. का, क. के सबदं ७–ग. धूम; ८–ग. पूछै; क. बूड़ै ९–ग. अठसठि; १०–क. ख. न दरसै; ११–ख. रहिबा; १२–ग. विरला; क. साधू हो; १३–ख. १४–क. ख. क्रित्य करता रहे बीचि ही ।

बकता सुरता मरि मरि जास्यो । रहिता रहस्यौं थीरं ॥
सार का चणां कोई विरला चावै । सति सति भाषंत श्री हणवंत बीरं ॥८॥७४५॥

※ अठसठि तीरथ जाकै चरणां । सोई देव तुम्हारे अंतह करना ॥
हणवंत कहै मन अस्थिर धरणां । बाहरि कितहू भटकि न मरणां ॥९॥७४६॥

पंथ चलै चलि पवनां टूटै । तन छीजै तत जाई ॥
काया तैं कछु दूरि बतावै । तिसकी मूड़ी माई ॥१०॥७४७॥

देह अंतर करौ रे अवधू । देह अंतर क्या छीजै ॥
हणवंत कहै देह तरक करता । कारज सगला सीजै ॥११॥७४८॥

हणवंत जी का पद (३)

बाघनि लो रे बाघनि लो । बाघनि है बटपाड़ी लो ॥
हेत करै घट भीतरि पैसै । सोषि लैवै नौ नाड़ी लौ ॥ टेक ॥
जिंद भी सोषै विंद भी सोषै । सोषै सुंदरि काया लो ॥ १ ॥७४९॥

जे जन जांनि रहै रह तासूं । मैं ताका बंदौं पाया लो ॥
बाघनि मीनी जिन जिन त्यागी । ताका अषै सरीरं लो ॥
ते नर जोनि कदे नहीं आवै । सत्ति सत्ति भाषंत हणवंत बीरं लो ॥ २ ॥७५०॥

अैसा लो रे तत अैसा लो । किम करि कथूं गंभीरं लो ॥
निराकार आकार विवरजित । यूं कथंत हणवंत बीर लो ॥ टेक ॥
दिष्टि न मुक्ति न अगम अगोचर । पुस्तग लिषा न जाई रे लो ॥
जापरि कृपा सोई भलि जानैं । कह्या न को पतिआई रे लो ॥
बाहरि कहूं तो सतगुर लाजै । भीतरि कहूं तो झूठा रे लो ॥
बाहरि भीतरि सकल निरंतरि । सतगुर सबदां दीठा रे लो ॥
मीन चलै जल माघ न दीसै । रूप बरन है कै साले रे लो ॥
पहौप बास ज्यूं रहै निरंतरि । प्रम तत है अैसा रे लो ॥ ३ ॥७५१॥

आकासां उडि चलै विहंगम । पीछैं षोज न दरसै रे लो ॥
बाल जती हणवंत यूं प्रणवैं । निज तत बिरला प्रसै रे लो ॥

※ ९–११ संख्यक पद्य केवल ग प्रति में ही हैं ।

तत बेली लो तत वेली लो । अलष बिरष बिल मेली लो ॥
बाड़ी बोज बिरह निज बाह्या । गगनां जाइ रहेली लो ॥ टेक ॥
अमी कुं सूँ घोरा बांध्या । अभरा कूप भरेली लो ॥
चेतन पांणत्ति पांषण लागौ । अंबर छेदि बघेली लो ॥ ४ ॥७५३॥
पेड दिसा तै पावक पोष्या । सेली अमी चबेली लो ।
रूप बरण वाकै कछु नांहीं । बप बिन मृघ चरेली लो ॥ ५ ॥७५३॥
निज ही कमाई तिन भल पाई । सहजैं फूलि रहेलो लो ।
बदंत हणवंत बोल्या रे अवधू । ऐक अमर फल देलो लो॰ ॥ ६ ॥७५४॥

॰ ग प्रति में "सिधां का पद" शीर्षक देकर कई योगियों के पद संगृहीत हैं । उनमें हणवंत के नाम के ये पद हैं । इनमें से कई पद स्वल्प पाठान्तर के साथ क प्रति में पाए जाते हैं, जो ऊपर संगृहीत हो चुके हैं ।—पं॰

परिशिष्ट—१

श्री परवत सिद्ध का कह्या भूगोल पुराण

ओअं आगमु जरि बाइ विसिनु जडि सूरजु मडंलिओ। सति उत्पति आदि अविगति ते अंकासु उत्पन्निओ। अंकासु ते बाइ उत्पन्निओ। वाइ ते तेजु उत्पन्निओ। तेज ते ब्रह्मंडु उत्पन्निओ। ब्रह्मंड फुटि गुटिका भइओ। तेज के मधि बिसनु रहिआ। बिसुन के मधि ब्रह्म रहिओ। सो ब्रह्म बाइ कीओ। पचासी कोट जोजन प्रिथमी प्रवाण है। चउरासी लाख जोजनु सुमेरु पर्बत ऊंचा है। सोलह सहंस्र मधि गडिआ है। वीस सहंस्र ऊपरि बिधि विस्थारु है। तिसु सुमेरु पर्बत ऊपरि अष्ट स्रिग है। भिन्न-भिन्न हैं। एकु लाख जोजनु आपस मधि अतरा है। एकु एकु सिङ का कउणु कउणु सिङ है— म लवंत सिङ है। ऊचवंतु सिङ है। हेमवंत सिङ है। प्रमाथु सिङ है। लीलावतु सिङ है। सन्तवतु सिङ् है। गुपूप्रदान सिङ् है। महारसु सिङ् है—ऐसे अष्ट सिङ् हैं ॥

प्रिथमी प्रमान—सुमेरु पर्बत ऊपरि सुवर्ण मई है। कैलास समुन्द्र है। बड़ा राजा है। गणरद्र बिछु है। मनं है। पारजात कवलात गज विराजता है। वैकुंठ मैं पुनीत है। प्रधान पड़दे एक है। एते सुमेरु पर्बत दछिन दिसा आगै जबूं बिछ है। तिसु बिछ का केता कु कु विधि विस्थारु है। एकु लाखु जबूं का बिथि विस्थारु है। तिसु ब्रिछ के हस्तो प्रवान फन है। सो फलु पुनीम धरतो प्रवाह चलता है। सो प्रवाह मानसरोवर जाता है। सो सफलु पुनीत है। तिसु फल कीआं, जल कोआं नदीआं बहतीआं हेनि। आगै जमवतं पुरी है। सर्व पापी बसते हेनि। असंख जन्म के। जो जो जनु जल अव मजंनु करै काइआ सुवर्ण की होइ जाइ। प्रिथमी ऊपरि आगै खंड हैं। कउन कउन खंड है :—केतमाल खंड है। भार्थ खंड है। नीलबिछ खंड है। रांभि खंड है। हरिआन खंडु है। कुरंजल खण्ड है। किसिनु खण्ड है। भिलमिल खँड है। गिआन खंड है। एते नउ खंड—प्रिथमी प्रवान है।

प्रिथमी ऊपरि आगै दीप है। कउन कउन दीप है :—पउछल दीप है। सलमल दीप है। जंब्रू दोप है। कुसुम दीप है। पुस्कर दीप है। कुरंचल दीप है। संगला दीप है। तिनका पिवरा कितनाकु है—त्रै लख जोजन जबूं दीप का बिधि-विस्थारु है॥ खारा समुद्र पर बसियता है। चउरासी लख जोजनु संगलदीप है। मधि समुन्द्र पर बसिटाता है। बारहकोट जोजन कुरचंजलदीप है। रूप समुन्द्र बिसिटाता है। बीस कोट जोजन कुसदीप है। दुध समुन्द्र पर बिसटाता है। चालीस लाख जोजन संगलादीपु है। दधि समुन्द्र पर बिसिटाता है। संगलादीप के ऊपरि गरुड़ का दुआरा है॥ आगे समुन्द्र है—कउणु कउणु समुन्द्र है–खारा समुन्द्र है। ईख समुन्द्र है। मधि समुन्द्र है। रूपस समुन्द्र हैं। सेत समुन्द्र है। खीर समुन्द्र है। दधि समुन्द्र है। एते सत समुन्द्र हैं। प्रिथमो प्रवाण:—कुरंभ की पीठ ऊपरि संसार है। तिस कुरंभ का त्रिधि-विस्थार केता है—दोइ कोट जोजन कुरंभ की मूछा है। पचास कोटि जोजन कुरंभ का पीठि है। एक कोट जोजन कुरंभ का मस्तकु है। दुइ कोट जोजन कुरंभ के नेत्र हैं। एक कोट जोजन कुरंभ का मुख और माथा है। सति कोट जोजनु कुरंभ को जीभ है। चारि कोट जोजनु कुरंभ के चारों पग हैं। दस कोट जोजन कुरंभ की अंगुली है। सपति कोट जोजन कुरंभ ऊँचा है। एकु अर्ब प्रिथमी ते दूणा है। तिस कुरंभ का मूख पूर्व दिसा में है। तिस कुरंभ का पग चारउ दिशा है। पूर्व पछमु उत्तरु दखिनु। तिस कुरंभ की प्रिष्टि ऊपरि अष्ट द्विगजन (दिग्गज) है। कदी जेकरि कुरंभ उलटै तउ प्रिथमी का नास होइ जाय। एते कुरंभ प्रवान है। पुनी च पुनोरीक बैठे हैं। तिनकउ निरंजनु पुरीषु अहार देता है। सर्व भूमिके प्रिपालिक हैं। इकु लाख जोजनु ऊचे हैं। अठारह कोट जोजन उनका विधि बिस्थार है। दो कोट जोजन उनका सुरिकि है। तीस कोट जोजन उनके दंत हैं। ऐसै द्रगिजन बैठे हैं। प्रिथमी की रछापाल करते हैं तिसु कुरंभ के मुख मस्तकि ऊपरि शेषनाग बैठे हैं। सहस्रं फन है। दोइ सहस्रं नेत्र हैं। पंद्रह कोट जोजन एक एक मस्तकि का विधि विस्थार तिस शेषनाग का मुख सदा हरि हरि होता है। तिसु शेषनागके मुख सदा मस्तकि ऊपरि महा बैराहु बैठा है। प्रिथमो कउ देखता है। अनन्त मूरति है। तिस महा बैराहु के आगै एह प्रिथमी माटी लगी है। प्रिथमी ऊपरि आगै पर्बत चले—उदि अंचल पर्बत है। हिव अंचल पर्बत है। रत अंचल पर्बत है। बुध अंचल पर्वत

है। सुत अंचल पर्वत है। दानागर पर्वत है। मालीगर पर्बत है। खिवै पर्बत है। एते सप्त पर्वत प्रिथमी प्रवाण ॥ जेते समुद्र तेते पर्बत। पर्बतों की गति समुंद्र प्रलय होयगा ॥

सुमेरु पर्वत ऊपरि चारि दिशा चारि पुरीआ हैन। कउणु कउणु पुरी—कउणु कउणु दिसा है। पूर्व दिशा आगै ऊपरि—प्रिथमी ऊपरि चउबीस सहंस्र जोजन अंम्रितपुरी उची है। तहाँ राजा इंद्र राज करता है। त्रेतीस कोट देवते हैं। अठासी हजार सहंस्र भूषीपुर हैं। दछिन दिशा आगै प्रिथमी ऊपरि। पचीस सहंस्र जोजन जमपुरी ऊचो है। चउसठ सहंस्र जोजन सर्वस्त्रा है। पछिम दिशा आगै प्रिथमी ऊपरि बिआलिस सहंस्र जोजन ऊसिकापुरी ऊची है। ऊपरि बसता है। तहाँ राजा सुमेरु राजु करता है। सूरजु उद्यंचल ऊपरि उदै होता है। अस्ताचल ऊपरि अस्तु होता है। सूरज चलते ही सिख्या दोइ सहंस्र जोजन एक निमिष महि सूरज चलता है। आगे पुरीआँ पाँच अउर हैं। कउण कउण पुरी है—त्रेतालीस सहंस्र जोजन उलका पुरी का विधि विस्थारु है। पचास सहंस्र जोजन जमवंतपुरीका विस्थारु है। अठासी सहंस्र जोजन अचलपुरी का विधि विस्थारु है। सत्रह सहंस्र जोजन महिआनकपुरो परि मध्यान करता है। सूरजि जमपुरी पर अधिमान करता है। सूरजु मध्यानपुरो मधि रात करता है। तहाँ रोमचलित्र ऋषीसर कल्पमानु होता है। नितप्रति एक रोम अंगे ते टूटता है।

एक लाख सूरि उदे होता है। तदि लाल स्रिष्टि कउ नजर आवती है। जब सूरज चलता है तातो अकांस प्रमाण है। नउ असंख अठितालीह पदम अठितालीस नील चउतीस परब उनहत्तरि अर्ब स्तानवै कोड़िड पंचीसलाख पचानवे सहंस्र पचास-लाख जोजन धरती अंकास का अंतरा है। गुहिज असिथान का बेवरा कितनाकु है—प्रिथमी ते चारि जोजन मेरा (मेरु) मंडलु ऊपरि है। अम्रितधारा सदा बरिषता है। मेघमंडल लोक ऊपरि एक लाख जोजन सूरजलोक है। बियाली सहंस्र जोजन सूरिज लोक का विधि विस्थारु है। सूरज लोक ऊपरि एक लाख जोजन चन्द्रमालोक का विधिविस्थारु है। चन्द्रमालोक ऊपरि एक लाख नछत्र लोक है। पचोस सहस्र जोजन का नछत्र लोक का विधिविस्थारु है। नछत्र लोक ऊपरि एक लाखु मंडलोक

है । तीस सहंस्र जोजन मंडलोक का विधिविस्थारु है । सोम लोक ऊपरि एक लाख जोजन सुक्र लोक है । उणासी सहंस्र जोजन सुक्र लोक का विधिविस्थारु है । सुक्र लोक ऊपरि एकलाखु जोजन वृहस्पति लोकु है । अठासी सहंस्र जोजन वृहस्पति का विधिबिस्थारु है । वृहस्पति लोक ऊपरि एकुलाख जोजनु बुध मंडल है । तीस सहंस्र जोजन बुध मंडल लोक का विधि विस्थारु है । बुध मंडल लोक ऊपरि एकु लाखु जोजन सुख मंडल लोक है । अठासी सहस्र जोजन सुख मंडल लोक का विधिविस्थारु है । सुख मंडल लोक ऊपरि एकुलाख जोजनु राह मंडल लोक है । अठासी सहंस्र जोजन राह मंडल लोक का विधिविस्थारु है । राह मंडल लोक ऊपरि एक लाखु किरेत मंडल लोक है । सोलह सहंस्र जोजन किरेत मंडल लोक का विधिविस्थारु है । किरेत मण्डल लोक ऊपरि एकलाख जोजन किसन लोक है । चउसठ जोजनु किसन लोक का विधिविस्थारु है । किसन लोक आगे राहु कितना कूं दित्ता है । किसनलोक ऊपरि एक लाखु जोजनु सप्तऋसीसुर हैं । भिन्न भिन्न है । एक लाखु जोजनु बिसनु मण्डल लोक ऊपरि प्रान अंकार है । सु निरंकार है । तहाँ श्रीनारायण बैठे हैं । पउणु सरूपा बसते हैं । देवते रछिया करते हैं । शब्द सुनते हैं । परु अखों देखते न है । अमीजल अंचवते हैं । तहाँ गति कउन पावते हैं । अकालमधि अखंड मूरति है ॥ १ ॥ ४४७ ॥

॥ इति श्री भोगलुपुरान समाप्तं ॥

परिशिष्ट २

शब्दार्थ

अंष=आँख ।

अंषिडतं > अखंडित ।

अंधारा > अन्धकार ।

अउहाट = औहट, औघट, कुघाट ।

अकल = कला--रहित, जिसकी कलना न हो सके ।

अकुलीन=कुलीन का उल्टा, शिव ।

अक्रिता > आकृति ।

अर्क चितली = आक और चितली नाम के बनौषध ।

अर्क=आक, अकवन ।

अषह=आँख का ।

अजरावंर > अजरामर ।

अडौ=अड़ गया ।

अणषूट=अनखूंटी, अनटूटी ।

अणचाषी=जो चखी न गई हो ।

अणपरचै = अपरिचित ।

अथवै=अस्त होता है ।

अदलि=न्याय ।

अनहद
अनहद्‌यु } अनहद, अनाहत ध्वनि ।

अनली बाई = अन्य वायु ।

अनिच्छर > अक्षर, अविनाशी ।

अबाइ > अ-वायु ।

अबेझ > (१) अवेध्य, (२) अभेद्य ।

अबीह=अवेध्य ।

अभेवं > अभेद्‌य, जिसका भेद या रहस्य ज्ञात न हो ।

अभषे > अभक्ष्य ।

अमली=नशावाला ।

अर=और ।

अरभवन = अरु + भवन=और घर ।

अलिप वक्ता > अल्प वक्ता ।

अलोय > अलोप ।

असम=असमान ।

असरालं > असरार, भेद, रहस्य, द्वन्द्व ।

असोझ=अशुद्ध, अपवित्र ।

अस्छान > स्थान ।

अस्त्री > स्त्री ।

अस्थंभना > स्तंभन ।

अहला
अहिला } =था ।

अहूठा=साढ़े तीन ।

आंहैनि > हैं ।

आइस > आयसु > आदेश । 'आदेश' नाथ योगियों का संभाषण है ।

आक > अकवन ।

आष=आखा, पूरा, समूचा ।

आष्बे } =कहे ।
आष्बैं

आछैं=है ।

आडा=तिरछा, टेढ़ा तिलक ।

आडाडंबर=आडंबर, घटाटोप ।

अम्हे=मैं ।

आदिमेर>आदिमेरु ।

आपणपौ=अपनापा ।

आपा>आत्मा, आप ।

आपौ राष्यां=खुद रक्षा करने से ।

आयसं>आयसु, आदेश ।

आरंन>अरण्य, बन ।

आरोगता>आरोग्य, नीरोग होना ।

आलै=आलवाल में ?

आब=पानी, चमक ।

आवटसी=आवर्तित होगी, घूम जाएगी ।

इंछा>इच्छा ।

इंद्रया>इन्द्रिय ।

इग्यारी=एकादशी ।

इला=इड़ा नाड़ी ।

उंचरते=कहते हैं ।

उंनथि>(१) उन्नति, (२) उन्मत्त ।

उछंचल>उच्चंचल, अत्यंत चंचल ।

उजाई } >उदयान, ऊपर की ओर चढ़ना ।
उजीणी

उजीरं>वजीर ।

उडियांणी=(१) उड़ीं, (२) इड्डियान बंध ।

उतपनि>उत्पन्न ।

उतिण>उत्तीर्ण ।

उदबीरज>उद्भिज्ज ।

उदि अंचल>उदयाञ्चल ।

उद्रपात्र>उदर पात्र, पेट ।

उनंथ गो छिलो>उन्मत्त था ।

उनमनी>मनोन्मनी अवस्था, समाधि ।

उनमांन>अनुमान ।

उपनी>उत्पन्ना ।

उपाधि=टंटा, फ़साद ।

उबट बटा>उद्वर्त्म वर्त्म, ऊबड़ खाबड़ या टेढ़ा मेढ़ा रास्ता ।

उसारबा>उत्सारितव्य, उलीचना ।

ऊधा=औंधा ।

ऊधरैं>ऊर्ध्व ।

उभा=खड़ा ।

उलो विलोग ना=उल्लू विलोकता (देखता) नहीं ।

ऊसिका=उसका ।

ऐकलड़ौ=अकेला ।

एकोंकार=एक मात्र ओंकार ।

एकोतर>एकोत्तर, एक अधिक ।

ऐती—इतनो ।

ऐन>(१) अयन, (२) ये नहीं ।

ऐहड़ो=ऐसा ।

कंकार>(१) कंकाल, (२) ककार ।

कंतरि>कान्तार, बन (में) ।

कंथड़ी } =कंथा ।
कंथौ

कंदलि>कंदल (मूल), जड़ में ।

कंध>स्कंध ।

कउणु=कौन ।

कचोला=कटोरा ।

कटकई>कटक, सेना ।
कटाली=कटारी ।
कड>कृत ।
कतेब>किताब, धर्मग्रंथ ।
कतो आगलो=कहाँ से आया ।
कदी, कदे } =कभी ।
कबलास>कैलास ।
कन्न>(१) कण, (२) कर्ण ।
क्रम>कर्म ।
क्रमणां>कर्मणा ।
कृप=कृपा ।
कृसुधो>कृशधी, दुर्बल मतिवाला ।
करंग>कुरंग, मृग ।
करद सबद=व्यष्टि में प्रतिबिंबित शब्द ।
करन>करण ।
कलकंत>कलकांति, सुन्दर ।
कलाल=मद-विक्रेता ।
कलू>कलौ, कलिकाल में ।
कल्पमानु=एक कल्प प्रमाण ।
कल्पौ=कल्पित किया ।
कलालो>मद बेंचनेवालो स्त्री ।
कवारी>कुमारी ।
काइआ=कब ।
कांई=कैसे, क्यों ।
काकण कार=पैसा बटोरनेवाले ।
काचसि=कष्ट पाता है ।
कातिस=कातर होता है ।
कादोर=कादर, कातर ।
कायारा=शरीरका ।
किगर>किंकर ।
कितनाकु=कितने ही ।
किनथू=किन से
किन अरथ=किस कार्य के लिये, क्यों ।
किरेत=कृतकर्म ।
किसी=कैसा, किसे ।
कीधा>कृत, किया ।
क्रीला>क्रीड़ा ।
कीरया>क्रीड़ा ।
कुंचील>कुचैल, मैला (२) क्वचित् (?)
कुंती=से ।
कुतवालं=कोतवाल ।
कुठाल=कुठार ।
कुरंभ=कूर्म ।
कुरतै>कुरुते, करता है ।
कुरी>कुल, समूह ।
कुलक=एक औषधि, कुचिला ।
कुसदीप>कुशद्वीप, कुशस्थल नामक द्वीप ।
कुसमुषला=कुश की जड़ ?
कूंण>(१) कोण (२)=कौन ।
कूकै=बोलता है ।
कूचा=सँकरा मार्ग, गली ।
कूजिबा=बोलना ।
कूर>क्रूर ।
केतमालं>केतुमाल, जंबूद्वीप का एक खंड ।
केल=(१) किया, (२) केलि
केसीसूत्र ?
काथली=कोठरी ।

क्रोड़ी } =करोड़ ।
क्रौड़ }

षंडै=खंडित करता है ।

षंघ>स्कन्ध ।

षंडौत्ति=खंडित करता है ।

षपरड़ै=खप्पर ।

षरतर=खरतर, तेज ।

षंणो>खंडे ।

षांड़ा>खड्ग ।

षाइं>क्षय ।

षास्या } =खाएगा ।
षास्ये }

षिमिया>क्षमा ।

षुध्या>क्षुधा ।

षूटसी=कम हो जाएगा, नष्ट हो जाएगा ।

षूटै=टूटता है ।

षेत्र, >क्षेत्र ।

षेदनं>खेद पहुँचानेवाला, नाशक ।

षेड़ } >खेट, गाँव, खेड़ा ।
षेड़ै }

गंठि=गाँठ में ।

गडोला=गड़ गया ।

गभै=गमता है, अनुमव करता है ।

गरवा>गुरु, भारी, कठिन ।

गरास>ग्रास ।

गहोयौ=ग्रहण किया, पकड़ा ।

गाही>ग्राही ।

गैवर=हाथी ।

गुझि>गुह्य, गोप्य ।

षदूंकाल>क्षयकाल ।

षंडूं=खंडित करूं ।

षंदाया=खोदवाया है ।

षड़हड़िसी=भहराकर गिर जाएगा ।

षपत=खपता है ।

षमिया=क्षमा ।

षंडं>खण्डन ।

षांड=खाँड़, चीनी ।

षांडी>खंडिता ।

षालड़ि=खाल, चमड़ा ।

षिण>क्षण ।

षिमां>क्षमा ।

षीणों>क्षीण ।

षुनी>खूनी ।

षूंटा=(१) खूंटा (२) टूटना

षेचर>खेचर, (१) आकाश में चलनेवाला, (२) खेचरी मुद्रा ।

षेलणां=खेलना ।

गंजि=बाजार में ।

गडिया है=गड गया है ।

गथा=पूंजी जमा किया ।

ग्रबै=गर्व ।

गरब्बं>गर्व ।

गहरगती=गंभीरगति वाली ।

गांडर<गड्डुल, भेड़ ।

गिरवैरे>गिरिवर ।

गिरहो>गृही ।

गुटिका=गोली ।

गुदरै=(१) गूदड़ी (२) अलग हो जाता है ।

गुर नैं=गुरु ने ।

गूंडा=चूर्ण ।

गुहिज=गोप्य ।

गूंणि>गुण, गोन, रस्सी ।

गूझ<गुह्य, गोप्य।
गो=रे (संबोधनार्थक अव्यय)।
गोहाचक्र>गुहाचक्र।
गोहिओ=छिपाया।
ग्रभे>गर्भे।
ग्रहने>ग्रहणे।
घाँटी=गले के अंदर की घंटी, कौआ।
घाटा=घट्ठा।
घात=हिंसा, मारना।
चंक्रमण=चलना-फिरना।
चत्र=(१) चार, (२) चतुर, (३) चित्र, विचित्र।
चत्रकंठ>चित्रकंठ।
चत्रदस>चतुर्दश, चौदह।
चवेली>(१) च्युत होती है, (२) कहती है।
चष्ष>चक्षु।
चिंहना=चीत्कार करना।
चिगै=(१) चुगता है, चुनता है, (२) चुआता है।
चितांडं>चित्ताण्ड।
चिरकट=चिरकुट, चिथड़ा।
चीत>चित्त।
चीति>चित्त (में)।
चीताबरं>चित्राम्बर, चित्रित बस्त्र।
चीया=चेता।
चुंडा>चूड़ा, चोटी।
चौगिरदे=चारो तरफ।
चौबारै=चारों ओर (चतुर्द्वार)।
चौष्टि=चौंसठ।
च्यंवत्=चूता हुआ।
च्यारूं=चारों।
छछंद>स्वच्छन्द।
छादस>षोडश, सोलह
छाकि=तृत होकर, छक कर।
छाजै=शोभता है।
छिअ>(१) छूता है, (२) छीजता है।
छिलो=था।
छीजै=छीजता है, घटता है।
छेक=छेद।
छेरी=बकरी।
जंत>(१) यंत्र, (२) जन्तु।
जमागं>यमाग्रं=यम के सामने।
जमल संष>यमल सांख्य, द्वंदज्ञान।
जमारं>यमद्वार।
जरांग=जरा (वृद्धावस्था) का शरीर।
जलतन=जल विषयक।
जारछ्या>जलाता है, जीर्ण करता है।
जारज>जरायुज।
जाहरनई ?
जिषां>येषां=जिनका।
जिर्दविंद=जीवन और वीर्य।
जीअ>जीव।
जीवड़ो>जीव, जियरा।
जुरा>जरा, वार्धक्य।
जुगतै=युक्ति से।
जूरां=जरा।
जेकरि=जिसका।

जेवड़ी=रस्सी ।

जौंरा=जरा (बुढ़ापा) ।

झिरकित=
झुरकुट= } योगियों का पात्र ।

झूरे=चिन्ता करता है ।

टमकली=टिटिम्मा, ठाटबाट ।

टलंत=टलता हुआ ।

टांमा > ताम्र, लाल ।

टाकर=ताकता रहता है ।

टूकर=टुकड़ा ।

ठटा=ठाट ।

ठावौ=स्थिर करो, स्थापित करो ।

ठाहर > ठहरने का भाव ।

ठीकरै=ठिकरा ।

डबी=डिब्बा, पात्र ।

डालाइ ?

डिंभरे > दंभपर ।

डिगम्बर > दिगम्बर ।

डींगा=डोंग ।

डीबि=पात्र में ।

ड्यंभ > डिंभ ।

ढील > शिथिल, ढीला ।

तंबा > तंवू ।

तपिगुला=तपस्वी ।

तपीस=तप करता है ।

तलदंत पटी=नीचे के दातों की कतार ।

तेणइ=तृण ।

त्रटा=त्रुटित हुआ ।

तृकुटी > त्रिकुटी, भ्रूमध्यस्थान ।

त्रिबेणी=त्रिकुटी के पास का स्थान ।

तस्मई > तस्मै, उसके लिये ।

तिण > तृण ।

तिनकड़ > तृणकृत ।

तिरलो=पार किया ।

तुंड=चोंच, मुख ।

तुलाई=रूई की बनी हुई (मुलायम) ।

तेवण
तेवो } वैसा ।

तोट > ✓त्रुट् ।

थंभा > स्तंभ ।

थाकिलै=रहा ।

थाई=स्थित हुई ।

थारा=तुम्हारा ।

थिति > स्थिति ।

थिरंतां=स्थिर होने पर ।

थेगली=सहारा ।

थोइबा=रखना ।

थोहर=थूहर, वनऔषि-विशेष ।

दहूँ=(१) दुहूं, दोनों (२) धौं, न-जाने ।

दवादस > द्वादस ।

दरश्न
दरसन } दर्शन ।

दहून=दोनों ।

दाणा > दानव

दानागर=दाना चुगानेवाला, मुक्तिदाता ।

दानूं > दानव ।

दिषन > दक्षिण ।

द्रिष्टि न मुष्टि न=न दृष्टि का विषय, न मुष्टि का; अदृश्य-अग्राह्य ।

दिवानां=(२) पागल, मत्त (के) ।
दिसंतरो=देशान्तरी ।

दीदारी=दर्शन ।
दीस>दृष्ट ।

दुंदरता,>द्वन्द्व-रत ।
दुतर तिरो=दुस्तर (समुद्र) को पार किया ।

दुतिया>द्वितीय ।
दुरंगता>दूरगंत ।

दुरमुष>दुर्मुख ।
दुवटा=दोनों ।

दुहेला=विकट खेल, कठिन काम ।
देवता नैं दानूं=देवता-न-दानव ।

देवल=देवालय ।

देसड़ा
देसड़ैं } =देश ।

दोषणं>दूषणम्=दोष ।
दोभ्रक>दोजख, नरक ।

दोयपटी>दो पाटी ।
दोहेवा=दूहना ।

धंध=द्वन्द्व, दुनिया धंधा ।
धमाल=धमार ।

धर>धरा, पृथ्वी ।
धुरु>ध्रुव ।

धृग>धिक् ।
ध्रू>ध्रुव ।

धीग>धिक् ।
धोजै=विश्वास कीजिए ।

धीप=दीप ।
धूमि>धूम (में) ।

धौलाधर>धवल गृह,धवरहर,ऊँचा मकान ।
नंथ>नथ ।

नग्र>नगर ।
नथाइला=नाथे गए ।

नटाटंबर>नटाडम्बर, नट का सा वस्त्र धारण करनेवाले ।

नवेड़ा=निवेरा छुटकारा, त्राण ।
न्यौली>योग की एक क्रिया ।

नवला=नया ।
नवानै=(१) बाढ़ हट जाना,(२) नवान्न ।

नसी=नष्ट हो जानेवाली ।
णेराथान=न्यारा स्थान ।

नांइरता>न्यायरत ।
नाषीला=नष्ट किया, गिरा दिया ।

नाजाक>नाजुक ।
नाटो बेदी=छोटी बेदी ।

नाड़<नाटा, छोटा ।
निआंणी=न्यारी ।

निष्षपत=निर्द्वन्द्व ?
निखुट=निर्दोष ।

निगन=नग्न ।
निपजी=उत्पन्न हुई ।

निपाया=उत्पन्न किया ।
निनारत=न्यारा, पृथक् ।

नियति=माया का वह आवरण, जिससे असीम ससीम दिखता है ।

निरति > वृत्तियों का अन्तर्निरोध

निरमाइल > निर्माल्य ।

निरावल = साफ किया, निराया ।

निस्तर्‌या = पार कर गया ।

निसप्रेही > निःस्पृह ।

नीड़ा, नेड़ा } निकट ।

नैरति > नैर्ऋत्य (कोण) ।

निरताणौं > निरति-योग का साधन करो ।

निरालंम > निरालंब ।

निरेआ > निरय = नरक ।

निसपति > निष्पत्ति ।

निसासड़ै > निश्श्वास ।

नृदंदं > नि द्वंन्द्व ।

नैवति = नौबत, मंगलवाद्य ।

पंषि > पक्षी ।

पंषि = पंख या पंक नामक योगी, संपदाय-विशेष ।

पंषी, पंषेरु } पक्षी ।

पषा = पक्ष ।

पछाणिया, पछाणो } = पहचान ।

पट्टरोल > पट्टवस्त्र ।

पड़दार = परदार, परस्त्री ।

पणि छाड़या = प्रतिज्ञा छोड़ी ।

प्यछाणौं = पहचानूं ।

प्यंड > पिंड ।

प्रचै > परिचय ।

प्रत्तछि, प्रतषि } > प्रत्यक्ष ।

प्रम > परम ।

प्रवरत > प्रवृत्त ।

प्रसै = स्पर्श करता है ।

परचा, परचो, परचै } = परिचय ।

पंछे = पीछे ।

पउणु = पवन ।

पटंतरा, पटंतरै } समानता ।

पडॅरा > दूसरे का ।

पणि = प्रतिज्ञा ।

पत्याई = विश्वास करे ।

प्यंगुला > पिंगला (नाड़ी) ।

प्रग्रिह = परिग्रह ।

प्रतग्यां < प्रतिज्ञा ।

प्रभोधिबा = प्रबोध कराना, जगाना ।

प्रमुल महेमा = विपुल महिमा ।

प्रवांण > प्रमाण ।

परजालै = प्रज्वलित करता है

परभेदी = परपक्ष का भेदन करनेवाला ।

परबोधलो = प्रबोधित किया ।

परवरतते > प्रवर्तते, प्रवृत्त होता है ।

परिसाधूं > प्रसाद (से) ।

पसुवा > पशु ।

परवाणियाँ > प्रमाणित ।

पवनरी थित = पवन की स्थिति ।

पसाव > प्रसाद ।

पहुंता > पहुंचा ।

पांगल = पागल ।

पाइक > पदातिक, पैदल, सेवक ।

पाट पटोला = बहुमूल्य वस्त्र ।

पाड़ी > पालि, किनारा ।

पाथरिस्ये = बिछाएगा ।

पारष > परीक्षा ।

पारध = बहेलिया ।

पालं, प्रालं } पालन ।

पाहू = पत्थर ।

पिछानं = पहिचान ।

प्रिथमी > पृथ्वी ।

पिसण > पिशुन, कपटी ।

पुरविस्ये = परोसेगा ।

पूर्या = पूर्ण हुआ ।

पौल, पौलि } पौरि पर, द्वार पर ।

फटकीआ = पछोर लिया ।

फासू = मादक द्रव्य (ताड़ी ?) ।

फुनि > पुनः ।

फुरण > स्फुरण ।

बंगं = (१) धातु विशेष, (२) वक्र, टेढ़ा ।

बँटवा = वटुआ, थैला ।

बंस > वंश ।

पहुप, पहौप > पुष्प ।

पांडु > पीला ।

पाटण = शहर ।

पाडलं > पाटल, पुष्पविशेष ।

पातिग > पातक, पाप ।

प्रान अकार > प्राणाकार ।

पारग्रांमो = पारगामी ।

पालंग्यड़ा = पलँग ।

पावड़ी = पैरकी ।

पिंगुला > पिंगला (नाड़ी) ।

पिटरका = पिटोरा (पेटरूपी) ।

प्रिपीलिक > पिपीलिका, चींटी ।

पुनीच > पुनीत ।

पैसा = प्रवेश किया ।

प्रछण = परीक्षण ।

प्रग्रिह > परिग्रह, दानग्रहण ।

फांकि > फक्किका ।

फीटीला = नष्ट हुई ।

फुरै > स्फुट होता है, स्फुरित होता है ।

फोक = व्यर्थ ।

बंचियै = बांचिए ।

बंबूल > बबूल (वृक्ष) ।

बग्गा > बल्गा, लगाम, बाग ।

बगोध्यानी = बक की भाँति ध्यान करनेवाला, कपटी ।

बछ > बत्सनाग (औषध) ।

बटपारा = वटपार, लुटेरा ।

बनषंडी > बन में रहनेवाला ।

बज्रजती > वज्रयति ।

बदेस = विदेश, बुरा देश ।

बनाड़ी = वनवासी ।

बनिता=(१) बने हुए, (२) स्त्री ।
बमेक>विवेक ।
ब्यंद<विंदु, शुक्र ।
ब्यंब>बिंब ।
ब्रह्मं>ब्रह्मा ।
बरतणि=आचरण ।
बस्त>वस्तु ।
बहनी>भगिनी ।
बहिसंत>विहसंत ।
बांबई=बिल में ।
बाई>वायु ।
बाघी>व्याघ्री ।
बादंतैं=बदन्तें, कहने से ।
बादि=व्यर्थ ।

बबेकी>विवेकी ।
बयार=वायु ।
ब्यक्रम>विक्रम ।
बरणा>बरुणा ।
बलिबंडा=बलवान; दुर्धर्ष ।
बसेष>विशेष ।
बहावणि=बहानेवाली ।
बहोड़ी=लौटना ।
बाइब>वायव्य (कोण) ।
बाकल>वल्कल, आवरण ।
बाड़ी>वाटिका ।
बाद>वाद ।
बायबो=बहना ।

बारै=(१) जलाता है, (२) निछावर करता है ।

बारी>वाटिका ।
बासरय=दिन में ।
बिधं>विधि, प्रकार ।
बिगूता=असमंजस में पड़ा, नष्ट हुआ ।
बिचषिण>विचक्षण ।
बिढब>विडंबन ।
बिड़ो=तोड़ा खंडित किया ।
बित्र>वित्त ।
बिबरजित>विवर्जित ।
बियाली>व्याली, सर्पिणी ।
बिरध>वृद्ध ।
बिल्यायं=विलागया, नष्ट हो गया ।

बावै=बहता है,
बाहुड़ौं=बहुरूँ, लौटूं ।
बिदं>विंदु, शुक्र ।
बिगोवै=गँवाना, व्यर्थ में खोना ।
बिछुड़ै=बिछुड़त है ।
बिटंबते>विडंवित होता है ।
बितुंडे=बनाया ।
बिध बसेषा>विधिविशेषा (भाविनी कर्म-रेखा), यह विधि के वश में है ।
बिभै>विभव ।
बिघना>विघना, विधाता ।
बिलंबैलो>विलंबित हुई है, लटकी हुई है ।
बिलोवै=मथता है ।

बिसन जेन>विष्णुर्येन (जिसने विष्णु को)।

बिसरज>विसर्जन।

बिहंडनं>विखंडन, नाशक।

बीरज्यं>वीर्यं।

बूची=कनकटी, बिना कान की।

बेदन>वेदना।

बेवरा>ब्यौरा।

बैदभी=वैद्यक।

बैसो=बैठो।

बोउं>ओम्।

बोहित } =नाव
बोहूत्र }

भंडसि=भंडता है, बुरा करता है।

भंडै=भंडित करता है।

भगरड़ो=भांग।

भराला=भराया।

भांणे } भंडित करता है, नष्ट करता है।
भांणै }

भाठो=भट्ठी।

भार्थं } =भारत।
भारथ }

भिष्याडण>भिक्षाटन।

भुंजिबा=खावोगे।

भुंहु=(१) भौंह (२) भुहुँ करना=भोंकना।

भुषड़लो=बुभुक्षित, क्षुधित।

भूंरा>भ्रमर, भौरा।

भूषीसुर>भूकेश्वर, महाकाल, शिव।

भेवं>भेद।

बिसूक>विशोक।

बिहूनां>विहीना।

बुईला=बहने पर, चलने पर।

बूझि=समझ कर।

बेली=लता।

बेसा>वेश्या।

बैसिबा=बैठना।

बैसण=बैठना।

बौडामता=पागल, बौड़म।

बिघना=विधाता।

भंडारै=भंडार में।

भषिक=भक्षक।

भमार=भण्डार।

भांवनी>भाविनी, होनेवाली।

भाठा>भ्रष्ट।

भायं=भाया, अच्छा लगता है।

भावरि भोजन>खूब भावयुक्त भोजन।

भास्ये=भाएगा।

भिनि>भिन्न।

भुस=भूसा।

भुयंग अहारी=सांप के समान आहार करनेवाला, हवा पीकर करनेवाला।

भूखरु=भूख।

भेषारी=भेष धारण करनेवाले, भिक्षा जोवी।

भोगवै>भोगाता है।

भोजल=भवजल, भवसागर ।

मंझै=मुझे ।

मगर>मकर ।

मडी=मृता ।

मढली
मढी } छोटी मढ़िया

मतस>मत्तस्य ।

मदभारथ=मदमत्त होकर लड़ना ।

मनराइ
मनराई } >मन राजा ।

ममारं>ममकार, ममता,

मरदक>मर्दक, मसलनेवाला ।

मलँग=फ़क़ीर, विरक्त ।

मसकीनं>मिस्कीन, अकिंचन, कंगाल ।

मांगल>मांगल्य, मंगल गान ।

मांण>मान ।

माघ>मार्ग ।

मालं>माली ।

मीडकी=मेडकी ।

मुंचाते=छोड़ा ।

मुगध>मुग्ध, मोहग्रस्त ।

मुरेष>मूर्ख ।

मुसक=कस्तूरी ।

मूंडता=मुंडित ।

मूलंकार>मूलओंकार ।

मेल्हंत=डालता हुआ, उंडे़लता हुआ ।

मैंगल>मदगज, मदमत्त हाथी ।

भौंदू=भोंदू, मूर्ख ।

मंडानं=मंडन, शृंगार ।

मडलोक>मृतलोक ।

मत्तिवार
मतिवाला } =मतवाला ।

मृदंग स्कीजै (?)=(जिससे) मर्दन-किया जा सकता है ।

मनकड>मर्कट, बन्दर ।

मनि=मन में ।

ममड़ी=ममता ।

मृघ>मृग ।

मरम>मर्म ।

मलतन=शरीर रूपी मल ।

म्हारी=मेरी ।

मांडौं>मंडित या शोभित करना ।

माकड>मर्कट, बंदर

मानेष>मनुष्य ।

म्रिगानी=मृग (समूह) ।

मीज>मेद ?

मुंजली=मूँज ।

मुरदार=मुर्दा, बेजान ।

मुलमाधार=मुलम्मा धारण करने वाला, ढोंगी ।

मुसिया=मूसने वाला, ठग ।

मूँदड़ी>मुद्रिका ।

मूसेकनीं=कस्तूरी का ।

मेल्हि=डाला, फेंका ।

मैड़ी>मंडित, सुंदर ।

मैवांसा=किला ।
मोक्ष्य>मोक्ष ।
म्रित>मृत्यु ।
यंछ्या>इच्छा ।
यन्द्री>इन्द्रिय ।
यागरणं>जागरण ।
येते=जितने ।
रंने>अरण्ये, वन में ।
रघुवैद>ऋग्वेद ।
रड़ा=चिल्लाया ।
रधर>रुधिर ।
रलाइ>(१) रुलाकर, (२) मिलाकर ।
रस्यौं=रहूँगा ।
रहनि=आचरण ।
रहसि=रहस्य ।
रामैं=राम को ।
राकसनी=राक्षसी ।
राछिया>रक्षित ।
राते=(१) रत, रमा हुआ, (२) लाल ।
राव=राजा, रईस ।
रासी>राशि ।
राह मंडल>राहु मण्डल ।
रिंगनी=रेंगनेवाली, सरकनेवाली ।
रिष>ऋषि ।
रिणवासं=रनिवास ।
रिवरिवै=लिबलिबा ।
रुषांत=बृक्षों में ।
रूपस=रूपवती ।
रैति=रेती ।
रोम चलित्र=रोम चरित्र ।
लंब=लंबा ।
लंबिका=लटकने वाली ।
लई=इसलिये ।
लष्षा>लक्ष ।
लछि>(१) लक्ष्मी (२)>लक्ष्य ।
लबधि=(१) लब्ध होकर (२) लब्धि, प्राप्ति ।
ल्यौलीना=लवलीन ।
लहुड़ा>लघु, छोटा ।
लार>लाला ।
लालं=लाल ।
लियते
लीयतं } >लीयते, लीन होता है ।
लुणै=लुनता है, काटता है ।
लूषा=रूखा ।
लूचा=लुच्चा ।
लेज>रज्जु ।
लेव=लेना ।
लोहड़े=(१) लोहा (२) लहू, रक्त ।
लोहीं=लहू, रक्त ।
वधैनी=वर्द्धित हुई, बढ़ी ।
वहो अकारं>वहु आकार (वाला) ।
वाघनि>व्याघ्रिणी ।

विकलपो > विकल ।
विजोवै > देखता है ।
विटंमते = विडंबन करता है ।
विधातो > विधाता ।
विमर्ण > विवर्ण ।
विमणं > विमनाः, अन्यमनस्क, उदास ।
विव्रती = विव्रत ?
विसंभर > विश्वंभर, जगत्पालक ।
वोछी = ओछी ।
वोउझै > बूझै ।
वोसन्तर > वैश्वांतर, अग्नि ।
श्रव > सर्व ।
संऊआल > संसार ।
संक्या > शंका ।
संष > सांख्य, तत्त्वज्ञान ।
संषड़ी = संस्कृत, शुद्ध ।
संगर = युद्ध ।
संगला द्वीप = शाकल द्वीप ।
संध > संधि ।
संपुष्ट = परिपुष्ट ।
सत्रनी = शत्रु (स्त्री) ।
सति सति = सत्य सत्य ।
सति मा = सौतेलो माँ ।
सदायबो = सताना ।
सनद > संधि ।
सपत सलता > सप्त सरिता ।
सपता > सप्त ।
सबली > शबरी ।
सभ > सर्व ।
समंद > समुद्र ।
समग्यो = उमगा ।
समानी = प्रवेश किया ।
समो > सम, बराबर ।
सरपे = सर्प ।
सरबस्वालिकं > सर्वस्वालीक सब-कुछ मिथ्या है ।
सरासेत = चिता की सफेदी ।
सरावै = सड़ाता है ।
सरीसूं = शरीर से ।
सलवा = दूर करना, छीन लेना ।
सलिता > सरिता ।
सलेषमा > श्लेष्मा ।

स

सल्मल > शाल्मलि (द्वीप)
सवार्‍यो = संवारा, बनाया ।
सहनांणी = सहिदानी ।
सहलै = सहन किया ।
सहू = सब (अप०-'साहु') ।
सहेती = (१) प्रेमिका, साथी, (२) से ।
सांटि = पूंजी ।
सांधि = संधि ।

साइर>सागर

साथरड़ै>स्रस्तर, चटाई।

सार=लोहा।

साही=साही जंतु।

सिउ=से, सौं।

सिखा=शिखर।

सिषर>शिख।

सिड़ी=सनकी।

सिरसाही=शिरोज।

सीक्या=सेंका।

सुकल>सु-कुल।

सुषमनां } >सुषुम्णा (नाड़ी)।
सुषमनि }

सुध=(१) सुधि, खबर, (२)>शुद्ध।

सुपन>स्वप्न।

स्रसुंति>सरस्वती।

सुरति>प्रीति, स्मृति, अन्तर्लीन-होने का भाव।

सुसंच=सुसंचनीय।

सूचा>शुचि, सारवान्।

सूभर>सुभर, पूर्ण।

सूवा>शुक।

सेती>से।

सैली=सेली।

सौरां=कपटी ?

स्यंभ>स्वयंभू।

साष्षावंत=शाखा वाले (२) साक्षात्।

साथर>स्रस्तर, बिछौना।

सारीषा=समान।

सिगरफ=हिंगुल।

सिंभ>सिंह।

सिख्या=(१) शिष्य (२) शिक्षा।

सिङ>शृङ्ग।

सिधा=सिद्ध।

सिहीणी=सिंहनी।

सीजै=(१) सींझता है, (२) सिद्ध होता है।

सुकाई=शुकदेव।

सुगुणां>सगुण।

सुच्या>शुचिता, पवित्रता।

सुधीरं=धीर।

सुमेंरे=सुमेरु (को)।

सुरता>श्रोता।

सुरिवां=शूरमा।

सुलिप>स्वल्प।

सुसमवेद>स्वसंवेद्य, अनुभव से प्राप्त ज्ञान।

सूफल>सुफल।

सूरिवां=सूरमा, वीर।

सेत>श्वेत।

सैंवार>शैवाल।

सौड़ि=चादर।

स्यंघ>सिंह।

स्वाधि अस्थान>स्वाधिष्ठान।

स्वार > सवार ।

स्वेतरज > स्वेदज ।

हृदे > हृदय ।

हांणि वृधि > हानि-वृद्धि ।

हालर = हिलोर ।

हेठ = नीचा ।

स्वारे = सँवारता है ।

स्वैल्यौ = सोओगे ।

हवैस्यें = होगा ।

हाजराकूं हजूरि = हाजिर के सामने ।

हिब = अब ।

होइस = होगा ।

—:❀:—

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	टि० १	प्रति से	'ग' प्रति से
१	१४	अनह घु	अनहद्यु
२	२०	विस रज	बिसरज
४	६	ब्रह्म अ गनिब जरांग सी क्या	ब्रह्म अगानि वज्रांग-सीक्या
	११	सू रां मनवानै	सूरां मनवां नैं
	१४	गोध लो	गो छलो
	टि० अंतिम पंक्ति	भाग्नि	भाजि
५	५	काणोरी	काणेरी
	टि० १	"	"
५	१५	मनवांनी	मनवां नी
	२२	काणोरी	काणेरी
६	४	विछोहया	विछोह्या
७	५	माठी	भाठी
८	१४	बाढुड़ौ	बाहुड़ौ
९	२५	थिरं तां	थिरंतां
११	३	साथ रड़ै	साथरड़ै
११	८	सेज या	सेज्या
११	८	पुर विस्ये	पुरविस्ये
१५	१०	वौ उझै	वौज्झै
१६	३	बसा	बेसा
१६	११	विगता	विगूता
२५	३०	जाग्रत राथान	जाग्रत रा थान

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६	१	ब्रह्मड	ब्रह्मंड
२६	४	आहारी	अम्हारी
२७	४	भोष्य	मोष्य
२८	२७	अह्मै	अम्है
३७	२०	स्यंम	स्यंभ
४९	२१	श्नवण	श्रवण
५९	१	अस्त्री जो निदीयते	अस्त्री जोनि दीयते
६१	२०	ऐन	ए न
६२	५	बिलो गना	बिलोग ना
६५	६	उडिसी	उड़िसी
६५	८	थण	थड़
६७	९	अर्मल	अर मल
६७	१२	गिर ही	गिरही
६८	२	सूरि वाँ	सूरिवाँ
६९	२	निरतार णौ	निरतारणौ
६९	६	दवा दस	दवादस
६९	१३	मया रे	भया रे
७३	२२	कै साले रे	कैसा ले रे
७४	१	बिल मेली	विलमेली

—:०—